शाश्वतधर्म
जून १९९१
सम्पादक जे. के संघवी

साहित्य मनिषी आचार्य देव श्रीमद्‌विजय जयंतसेनसूरीश्वरजी द्वारा लिखित / सम्पादित उपलब्ध साहित्य आज ही मंगवाइये।

* नमो मन से नमो तन से — पांच रूपये
  नवकार पर आधारित प्रवचनों का सुन्दर संकलन (द्विरंगी मुद्रण)
* जीवन ऐसा हो — पांच रूपये
  (मार्गानुसारी के पेंतीस गुणों का वर्णन, द्विरंगी आकर्षक मुद्रण)
* जयन्तसेन सतसई — चार रूपये
  (विविद विषयों पर ७०७ दोहों का संकलन)
* ज्योतिष प्रवेश — सात रूपये
  (ज्योतिष सम्बन्धी प्रारंभिक जानकारी)
* नवकार गुण गंगा — पांच रूपये
  (नवकार पर सुन्दर / भाववाही स्तवनों का संकलन)
* चिर प्रवासी — चार रूपये
  (जीवन यात्रा के विभिन्न पड़ावों पर उपदेशात्मक मुक्तक)
* गुरूदेव पुष्पांजलि — तीन रूपये
  (श्रद्धेय गुरूदेव श्रीमद् राजेन्द्रसूरिजी के भक्ति गीतों का संग्रह)
* तीर्थ - वंदना — तीन रूपये
  (विविध तीर्थों के मूलनायक भगवंतों के स्तवन)
* भगवान महावीर ने क्या कहा ? (हिन्दी/गुजराती) — बीस रूपये
  (आगम ग्रन्थों से चुनी हुई २५० सुक्तियों पर सुन्दर विवेचन)
* भक्ति सागर — दो रूपये
  (स्तवनों का संकलन)
* अरिहंते शरणं पवज्जामि (हिन्दी/गुजराती) — दस रूपये
* यतीन्द्र मुहुर्त दर्पण — इक्कावन रूपये
  (मुहूर्त संबंधी वृहद् संकलन)
* भक्ति प्रदीप (स्तवन) — दो रूपये
* हेम मुक्ति स्वयं सुधा (गुजराती) — पांच रूपये
* नवकार आराधना (हिन्दी / गुजराती) — पांच रूपये
  (नवकार पर मननीय प्रवचन)
* अष्टान्हिका व्यख्यानम् — दस रूपये
  (पर्युषण व्याख्यान)
* जिनेन्द्र पूजा संग्रह (वृहद्) (गुजराती) — इक्कीस रूपये
  (विविध पूजायें रंगीन चित्रो के साथ)
* जिनेन्द्र पूजा संग्रह (लघु) — दस रूपये
  (विविध पूजाये रंगीन चित्रो के साथ)
* पंचप्रतिक्रमण विधी सह (पॉकेट साईज) — दस रूपये
  (प्रतिदिन आवश्यक क्रिया में उपयोगी)

उपरोक्त पुस्तकें मंगवाने हेतु मूल्य के साथ प्रति पुस्तक पोस्टेज एक रूपया जोड़कर मनीआर्डर निम्नांकित पते पर भिजवायें —

शाश्वत धर्म कार्यालय, जामली नाका, थाने - ४०० ६०१ (महाराष्ट्र)

1313

शाश्वतधर्म

धर्म की विविधा में शाश्वतता का प्रवर्तक हिन्दी मासिक

संस्थापक - व्या. वा. आचार्यदेवश्री यतीन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.

संपादक : जे. के. संघवी

सहसंपादक : शांतिलाल सु[illegible]

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा
वा. क.

: संपर्क सूत्र :
☎ ५० ७७ २४ • ५० ११ ७६
शाश्वतधर्म कार्यालय,
जामली नाका, थाने - ४०० ६०१. (महाराष्ट्र)

सदस्यता शुल्क

बीस वर्षीय – तीन सौ रूपये
पांच वर्षीय – एक सौ रूपये
वार्षिक – पच्चीस रूपये

विज्ञापन शुल्क (एकबार)

पूरा पृष्ठ – ३००/- रूपये
आधा पृष्ठ – १७५/- रूपये
पाव पृष्ठ – १००/- रूपये
अंतिम पृष्ठ – ५००/- रूपये
(विशेषांक पर यह दर लागू नहीं है।)

वर्ष : ३९ ★ अंक ९ ★ जून १९९१

अखिल भारतीय श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद द्वारा संचालित

अवैतनिक सम्पादन : अव्यवसायिक प्रकाशन

शाश्वत धर्म - जून १९९१

क्यों ? कहाँ ?

अपनी बात	जे. के. संघवी	३
पथ के प्रदीप	मुनि श्री विमलसागरजी	४
सम्यग्ज्ञान : जीवन की अलौकिक रोशनी	आ. श्रीजयंतसेन सूरिजी	५
श्रीपद्म प्रभु जिन स्तवन (६)	मुनि श्री जयानंन्द विजयजी	९
सत्यसिद्धान्त प्रकाशिका	मुनि श्री प्रशान्त रत्नविजयजी	११
मरने वालों के लिये	मुनि श्री विमलसागरजी	१३
श्रावस्ती की विरल विभूति	श्री नैनमल सुराणा	१५
ज्ञान कसौटी (६)	श्री महेन्द्र जे. संघवी	१८
सौन्दर्य शरीर में नहीं आत्मा में	डॉ. शकुन्तला तंवर	१९
स्थायीदान (प्रेरक कथा)	राज सौगानी	२१
भावना से स्पर्शित नैतिकता धर्म है	श्री नरेन्द्र पोरवाल (मद्रास)	२२
पशुवध अर्थ व्यवस्था का वध है	श्री पन्नालाल मूंधड़ा	२५
मम्मी नहीं माँ बनिए	कुसुम गुप्ता	३१
शब्दसागर इनामी स्पर्धा(२)	प्रदीप एम. जैन	३३
कितनी सुरक्षित है एलोपेथिक दवाएँ	मुक्ता	३६
महावीर की निष्पक्ष दृष्टि	महेन्द्र जे. संघवी	४३
दृढ़ सम्यक्त्वी कार्तिक सेठ (ऐतिहासिक कथा)	श्री बसंतीलाल जैन	४१
समाचार दर्शन		४४
જીવતાં મરણા	કીર્તિભાઇ લાલચંદ વોરા	४९
णमोकार मंत्र, मानवता विकासनुं साधन	डॉ. शेखरचंद्र जैन	५३
नामस्मरण	कु. कान्ता शर्मा	२४
श्रावकाचार के प्रमुख सोपान	कु. संगीता जे. संघवी	३८

लेखक के विचारों से परिषद एवं सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है।

भूल सुधार

- 'शाश्वत धर्म' के अेप्रिल मास के अंक में श्री अभिनन्दन स्वामीजी के स्तवन विवेचन के अन्तर्गत पृष्ठ ११ की दसवीं पंक्ति में '**द्रव्य मन न होने से**' की जगह '**भाव मन न होने से**' पढ़ें।
- 'शाश्वत धर्म' के मई अंक में पृष्ठ २ पर 'छपते-छपते समाचार के अंतर्गत '**निरामिष**' की जगह '**सामिष**' पढ़ें।

अपनी बात

'शाश्वत धर्म' का ३९ वें वर्ष में प्रवेश

प्रस्तुत अंक के साथ ही 'शाश्वतधर्म' अपने प्रकाश के ३८ वर्ष पूर्ण कर ३९ वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। आप सभी के सहयोग, सदभाव और प्रेम के कारण ही यह लम्बा सफर सहज व सरलता से तय हो पाया है। गुरुदेव श्रीमद्विजययन्तीन्द्रसूरीश्वरजी के आशीर्वाद का बल एवं वर्तमानाचार्य श्रीमद्विजयजयंत सेनसूरीश्वरजी का मार्गदर्शन/प्रेरणा/सहयोग भी नहीं भूलाया जा सकता। गुरुदेव ने अंतिम समय में अपने प्रिय विनयी शिष्य जयन्तविजयजी (वर्तमान में जयन्तसेनसूरिजी) को समाज की दो धरोहर सौंपकर उन्हे आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी दी थी। ज्ञान वृद्धि हेतु शाश्वतधर्म का नियमित प्रकाशन एवं समाज संगठन व नवयुवकों की शक्ति के योग्य उपयोग हेतु अ. भा. श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद का संचालन। गुरुआज्ञा शिरोधार्य कर वर्तमानाचार्य श्री का शाश्वतधर्म के नियमित प्रकाशन व परिषद के संचालन में बराबर सहयोग व मार्गदर्शन मिलता रहा है।

वर्तमान में जनसंचार माध्यमों में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहा है। वीडीयों, टी.वी. फिल्म, रेडियो के प्रति लोगों का आकर्षण जिस गति से बढ रहा है उसे देखकर लगता है वांचन प्रणाली पिछड़ जायेगी। स्वाध्याय या शास्त्राभ्यास की पद्धति कम हो जायेगी, हो गयी है। ऐसी स्थिति में हमें ऐसा प्रयत्न करना होगा की परिवार के लोग सत्साहित्य को पढ़ने की ओर प्रवृत्त हो, वे फिल्मों की काल्पनिक दुनिया से बाहर आकर धार्मिक व सामाजिक प्रवृत्तियों से जुड़े। उनमें सुसंस्कारों, नैतिक बल, अध्यात्मिक लगन जागृत हो, इस ओर 'शाश्वत धर्म' प्रयत्नशील है।

आज सैद्धान्तिक मुल्यों का निरन्तर ह्रास हो रहा है। अहिंसा, सरलता, नैतिकता, आपसी प्रेम, भाईचारा प्रायः लुप्त होता नजर आ रहा है चारो ओर एक प्रकार की अंधाधुंधी व्याप्त होती जा रही है। भौतिक साधनों के नित नये आविष्कार/ विकास में वर्तमान विज्ञान आगे बढ़ रहा है लेकिन जीवन से शांति कोसों दूर होती चली जा रही है। हृदय में अंतरंग प्रेम का अभाव होता जा रहा है। सारी प्रवृत्तियों के पिछे विशेषकर क्षुद्र स्वार्थवृत्ति, कषाय जुड़ जाते है जिससे प्रवृत्तियों का मूल उद्देश्य एक तरफ रह जाता है परिणाम स्वरुप वे एक दिखावा मात्र बन जाती है। ऐसे समय मे आध्यात्मिक चेतना के नवजागरण हेतु 'शाश्वतधर्म' जैसी पत्रिकाओं की जवाबदारी और बढ़ जाती है।

'शाश्वतधर्म' प्रति माह धर्म के विविध पहलूओं को उजागर करता हुआ आपके हाथों में पहुँचता है। पूज्य आचार्य श्री की प्रेरक वाणी, साधु-साध्वियों, विद्वानों के चिन्तन लेख, स्वाध्यायियों के लिये ज्ञान कसौटी, बोधकथा, प्रेरक प्रसंग, दोहे, कवितायें, सूक्तियाँ, स्वास्थ्य चर्चा आदि के साथ महत्वपूर्ण शासन प्रभावना के अनुमोदनीय समाचारों एवं धार्मिक सामाजिक गतिविधियों की जानकारी के साथ इसका प्रकाशन हो रहा है। जीवन में सम्यग्ज्ञान, समम्यदृष्टि का विकास होकर जीवन उन्नत व समाज स्वस्थ बने, इसी उद्देश्य को लेकर 'शाश्वतधर्म' निरन्तर आगे बढ़ रहा है।

वर्तमान परिस्थितियों में आध्यात्मिक पत्रिका का प्रकाशन दुष्कर कार्य है। कागज स्टेशनरी, प्रिंटिग, पोस्टेज आदि के मूल्य बार-बार बढ़ते जा रहे हैं, फिर भी 'शाश्वत धर्म' के प्रकाशन में नयी तकनीक के भरपूर उपयोग का प्रयत्न रहता है। प्रकाशित मेटर के साथ ही उसकी साजसज्जा की ओर भी ध्यान दिया जाता है। हर माह नये इंद्रधनुषी रंगों में विविध विषयों को लेकर आर्कषक मुखपृष्ठ शोभायमान होता है, इन सबके बावजूद भी मात्र सम्यग्ज्ञान के प्रचार को लक्ष में रखकर नाम मात्र का मूल्य रखा गया है। आज दैनिक समाचार पत्र भी जो पहले २० या ३० पैसे में मिलता था, अब मूल्य लगभग एक रुपया पचास पैसा हो गया है। विज्ञापनों से लगभग दूर रहकर भी पिछले चार वर्षों से (वार्षिक पच्चीस रुपया, पंचवार्षिक एकसौरुपये व बीस वर्षिय तीन सौ रुपये) शुल्क में कोई अभिवृद्धि नहीं कि है।

आप सभी को ज्ञात है कि यह कोई व्यवसायिक पत्र नहीं है। इससे जुड़कर एवं अपने मित्रों, परिजनों का जोड़कर, उन्हें शाश्वतधर्म के ग्राहक बनाकर सम्यग्ज्ञान प्रचार/प्रसार के यज्ञ में सहयोग प्रदान करें

जीवन में आनेवाले विविध शुभप्रसंगोंपर जैसे तपस्या, जन्म, विवाह आदि के अवसर पर शाश्वत धर्म को सहयोग देना न भूलें। साथ ही आप अपनी तरफ से उपहार देते वक्त शाश्वत धर्म की सदस्यता का उपहार दें।

सभी ग्राहकों/पाठकों/शुभचिन्तकों के सहयोग, गुरुदेव आशिर्वाद एवं मार्गदर्शन के सम्बल को प्राप्त कर 'शाश्वतधर्म' अपने उद्देश्यों की पूर्ति करते हुए आगे ही आगे बढ़ता रहे, इसी आशा के साथ

J.K. Sanghvi

जे. के. संघवी

पथ के प्रदीप

उपदेश दो प्रकार से दिया जाता है.
एक : शब्दों से बोलकर.
दूसरा : आचरण से बतलाकर.
शब्दों के माध्यम से दिये जाते उपदेश
हृदय अतल गहराई तक
प्राय : नहीं पहुँच पाते,
जबकि आचरण की भाषा
हृदय को तुरन्त छू जाती है.
शब्द और तर्क बुद्धि को प्रभावित कर सकते है.
लेकिन हृदय उनको स्वीकार नहीं करता.
शब्दों का संयोजन कृत्रिमता है.
आचरण वास्तविक उपदेश है.
ठोस परिवर्तन आचरण का उपदेश लाता है.
इसीलिए तो गृहस्थों के उपदेश
इतने आदर से नहीं सुने जाते,
जितने कि त्यागियों के.
सदाचारी को कुछ कहना नहीं पड़ता,
उसका आचरण स्वत: ही
बहुत कुछ कह जाता है.

मुनि विमलसागर

सम्यग् ज्ञान : जीवन की अलौकिक रोशनी

आ. श्रीमद् विजय जयन्तसेन सूरिजी

तीन अक्षरों का है कितना सुहावना नाम!
एटमबम का करती है वह काम!
ऐसा उसमें क्या है चमत्कार!
करते हैं जिसे ज्ञानी-ध्यानी सभी नमस्कार!
चल नहीं सकता जिसके बिना कदापि जीवन व्यवहार!
अवलम्बन लेकर उसी का पहुँच गए अनन्त मोक्षद्वार।
सूर्य रश्मिवत् जिसे एक क्षण के लिए भी जुदा नहीं कर सकते हैं। ऐसी अभिन्ना सहचरी का नाम सुनते ही चमक आ जाती है आँखों में और प्रसन्नता छा जाती है आत्मप्रदेशों में!
वह कौन?
"रोशनी"
मानस को मुदित-प्रमुदित करती है रोशनी!
चित्त को चमत्कृत करती है रोशनी!
आत्मा को आलोकित करती है रोशनी!
हृत्तन्त्री को झंकृत करती है रोशनी!
ज्ञान-सम्पदा का विपुल भण्डार है रोशनी!
भौतिक-अध्यात्मिक जगत् को प्रभावित करती है रोशनी!
यदि वह नहीं, तो कुछ नहीं!
ज्ञानेन्द्रिय-जगत् में भी कम महत्व नहीं है उसका। यदि किसी के मनमोहक चित्ताकर्षक लुभावने नयन हों। किन्तु उनमें वह (रोशनी) नहीं है तो उन आँखों का कोई मूल्य नहीं!
इसी तरह आध्यात्मिक जगत् में सम्यग्ज्ञान की दिव्य-रोशनी प्रज्ज्वलित नहीं हुई है तो जीवन अन्धकारमय है, फीका है, निःसार और निष्फल है।
इसीलिए 'ज्ञानं सर्वत्रगं चक्षुः' कहा गया है। प्राणिमात्र प्रकाश चाहता है, रोशनी चाहता है। अन्धकार-तमस्कार नहीं।
तो अब चलिए "तमसो मा ज्योतिर्गमय"
अन्धकार से प्रकाश की ओर!

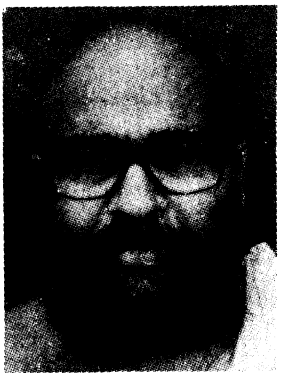

Sweech on करते ही जैसे कमरा रोशनी से भर जाता है,
वैसे ही सम्यग्ज्ञान की रोशनी प्रज्ज्वलित होते ही आत्म-मन्दिर जगमगा उठता है।
रोशनी! बाह्याभ्यन्तर सर्वत्र एक-सा प्रकाश प्रदान करती है।
कौन है इस जगत् में जो रोशनी के अभाव में एक समय भी जिन्दा रह सके!
रोशनी का प्रभाव समूचे जीव-जगत् को प्रभावित करता है।
दृष्टि-प्राप्त प्रत्येक को रोशनी रोशन करती है। इसीलिए

यत्र-तत्र सर्वत्र रोशनी के चाहक दृष्टिगोचर हो रहे हैं। बाह्य विश्व हो या आभ्यन्तर विश्व! बिना रोशनी के प्रकाशमान ही नहीं हो सकता है।
रोशनी सम्यग्ज्ञान की परिचायिका है।
अर्थात् आभ्यन्तर रोशनी होती है सम्यग्ज्ञान की!
ज्ञान की अतल गहराई में डुबकी लगाने पर यह सहज ही जिज्ञासा उभरती है कि आखिर ज्ञान है क्या?
'ज्ञायतेऽनेन इति ज्ञानम्'
जिससे जाना जा सके 'स्व' को, समझा जा सके 'पर' को, जिससे देखा जा सके जगत् को, जिससे पाया जा सके जीवन के सार को।
जिससे लिया जा सके अनुभव रसास्वादन
जिससे दिया जा सके जीवमात्र को जीवनदान
अभयदान!
ऐसा ज्ञान, नीति रूपी नदी के उत्पत्ति का मूलपर्वत है।
मन को पावन करनेवाला है।
चंचल चित्त को स्थिर करने में सहायक है और है स्वर्गापवर्ग तक पहुँचाने वाली सीढ़ी!
तत्त्वतः ज्ञान ही जगत् में सबकुछ है।
वह सूर्यवत् प्रकाशक है।
जैसे सूर्य अपनी दिव्य रोशनी से चमकता है। वैसे ही जीव ज्ञान-रोशनी से चमकता है। समूचे लोक में सारतत्त्व एकमात्र ज्ञान है। ज्ञान से ही जीव पदार्थ-तत्त्व को जानता है। ऐसी सम्यग्ज्ञान की रोशनी संसार में सर्वोत्कृष्ट पद पर प्रतिष्ठित है।
सम्यग्ज्ञान की रोशनी से ही दूर होता है तत्त्वातत्त्व का विपर्यास!
भूमिगृह में जैसे नहीं पहुँच पाती है दिनमणि की रोशनी और भरा रहता है सर्वत्र अन्धकार, तद्वत् अज्ञानी का जीवन भी रहता है तमस्कार से परिव्याप्त। अतः अज्ञान-निवृत्ती के लिए चाहिए सम्यग्ज्ञान की दिव्य रोशनी।
सर्वोत्कृष्ट धर्म है स्वगुणोपासना।
स्व अर्थात् आत्मा।
ज्ञान-दर्शनादि आत्मगुण है।
अतएव करनी है इन्हीं की उपासना।
जो स्व में निहित है, करनी है उसकी आराधना-साधना।
सम्यग्ज्ञान जीव का अभिन्न गुण है, गुण-गुणी का सम्बन्ध शाश्वत है।
अतः "ज्ञानाधिकरणमात्मा" न कहकर जैनदर्शन में "ज्ञानमयो एवायमात्मा" आत्मा ज्ञानमय ही है, कहा गया है। दोनों का परस्पर है अविनाभाव सम्बन्ध।
जैसे दीपक से दीपक की रोशनी भिन्न नहीं है, तद्वत् आत्मा से ज्ञान भिन्न नहीं है।
'Knowledge is nothing but it is Intutional.'

ग्रीक दार्शनिक प्लुटो

ज्ञान यह कोई बाहरी द्रव्य नहीं है। यह तो है आन्तरिक=आत्मिक। जिसका अन्दर से ही

(आत्मा में से ही) उद्‌भव होता है।
ज्ञान आत्मा का झरना है।
ज्ञान आत्मा की नीपज है।
ज्ञान मिथ्यारूप होता है और सम्यगूरूप भी।
मिथ्याज्ञान एकांशग्राही होता है जबकि सम्यगज्ञान सापेक्ष, और वह सभी अपेक्षाओं को लेकर चलता है।
मिथ्याज्ञान मिथ्यानुरागी करता है, तो सम्यगज्ञान शाश्वतानुरागी।
मिथ्याज्ञान पुद्‌गलानुरागी बनता है, तो सम्यगज्ञान आत्मानुरागी।
मिथ्या सड़न-गलन स्वरूप बनता है।
सम्यक् अखण्डता-परिपूर्णता को प्राप्त कराता है।
जैसे जहर घातक है और अमृत जीवनदायक।
उसी तरह मिथ्याज्ञान मारक है और सम्यगज्ञान तारक।
अत: मुक्ति मार्ग में सबल साथी ही नहीं, अपितु अभिन्नरूप रखनेवाले सम्यगज्ञान की गुणगाथा बड़े-बड़े दिग्गज ज्ञानियों ने गाई, ध्यानियों ने अपनाई तथा कल्याणकामी जीवों ने उसे अपना सच्चा सहचर-सखा रूप बनाया।
शुक्ति रजतदृष्टि-भ्रमात्मक है।
दृष्टि में रही अशुद्धता को ज्ञानांजन से दूर किया जा सकता है।
दृष्टि में अज्ञान की अशुद्धि परिव्याप्त है।
'अन्नाणं खु महाभयं'
यह अज्ञान है ही महाभयंकर।
और है सभी पापों-दु:खों की मूल जड़।
दृष्टि में भ्रम की भयानकता अपना डेरा जमाये बैठी है।
दृष्टि में 'मैं' और 'मेरा' की संकुचितता छायी हुई है।
दृष्टि में भेद-प्रभेद का आवरण भी छा चुका है।
इन सारी व्याधियों से ग्रस्त है जब दृष्टि, तब सम्यगज्ञान का दिव्य अंजन इन समूची व्याधियों को निर्मूल करने के लिए रामबाण और संजीवनी औषधिरूप है।
व्यक्ति बाहर से आने पर अपने स्वयं के द्वारा निर्मित बंगले में, यदि उसमें प्रकाश नहीं है तो, जाना पसन्द नहीं करता! ठीक वैसे ही बाह्य-जगत् में से आन्तरिक जगत् में जाना है तो बिना सम्यगज्ञान की रोशनी के सम्भव नहीं।
अनेकानेक सिद्धहस्त साधकों ने पूर्व में तद्‌विषयक ज्ञान-प्रकाश प्राप्त किया, तत्पश्चात् वे ही सिद्धि का संवरण कर सके हैं।
'जानो मानो और आचरण करो'
कितना सुन्दर चिन्तन और मंथन है,
ग्रंथों के पृष्ठों में अंकित प्रस्तुत त्रिवेणी का!
जानने के लिए चाहिए ज्ञान!
मानने के लिए चाहिए दर्शन!
जाना जिसने उसी ने माना।

मानने वाला आचरण के पथ पर गतिशील हो गया। इसका यह क्रम अनादि से चला आ रहा है विश्वांगण में। इसीलिए वीतराग मार्ग के आराधकों को सम्यग्दर्शन की भाँति सम्यग्ज्ञान की भी महती आवश्यकता रही हुई है।
जिसके अभाव में हेय, ज्ञेय, उपादेय का अनुभव नहीं।
जिसके अभाव में भक्ष्याभक्ष्य का भान नहीं।
जिसके अभाव में तत्त्वातत्त्व का बोध नहीं।
जिसके अभाव में सत्यासत्य का परिज्ञान नहीं, जिसके बिना स्व-पर का भेद-विज्ञान संभवित नहीं और जिसके बिना जीवन का सच्चा आनंद नहीं।
यथार्थत: सम्यग्ज्ञान की रोशनी जीवन की आभा को प्रकटित करती है।
व्यक्ति के व्यक्तित्व को उजागर करती है और करती है जीवन को सही दिशा प्रदान।
'सच्चिदानंद' और 'सत्यं शिवं सुन्दरं' का यह विश्वव्यापी उद्घोष प्रारम्भ से ही रहा है।
सत्-शाश्वत, चित्-चेतनत्व तथा आनन्द आत्मानुभूति अर्थात् सत्यदृष्टि, शिवंकर प्रकाश और अनुभवात्मक सौन्दर्य स्थिति जीवन का सार्वभौम स्वरूप प्रस्थापित करती है।
इस निर्मलीकरण की महत् प्रक्रिया का प्रारम्भ सम्यग्ज्ञान से ही सम्भव है। जिसका विभक्तिकरण नहीं किया जा सकता।
प्रत्येक जीव का जीवंत स्वरूप ही सम्यग्ज्ञान है और इसी की प्रधानता रही है इस जीव-जगत् में।
इसीलिए सम्यक् अर्थात् सच्ची समझ।
जो आत्मा को सीधी राह दिखा दे, सम्यग् चला दे, सीधा चलना सीखा दे, वही ज्ञान आत्मज्ञान है, सम्यग्ज्ञान है, जीवनज्ञान है और परम व चरम को मिला देने वाला है।
परम अर्थात् सम्पूर्ण।
चरम अर्थात् गमनागमन की समाप्ति।
ज्ञानदृष्टि सृष्टि का स्वरूप समझाती है।
त्रैकालिक सत्य का अनुभव कराती है।
और विश्वव्याप्त सर्वांगीण स्थिति का स्पष्ट ज्ञान कराती है।
एतदर्थ सम्यग्ज्ञान की रोशनी को प्रज्ज्वलित रखने के लिए प्रत्येक को पुरुषार्थ करते रहना नितान्त आवश्यक है।
जिनशासन जयवन्त है चूँकि उसने प्राणिमात्र को ज्ञान का सम्यक् मार्गदर्शन दिया। मार्गदर्शन के साथ ही जीवनदर्शन, आचारदर्शन, व्यवहारदर्शन, आत्मदर्शन और अनुभवदर्शन भी कराया।
परमज्ञानियों ने आत्मिक पावनता के लिए इस सम्यग्ज्ञान की रोशनी के विशिष्ट स्वरूप को उजागर करते हुए उसे अपनाने हेतु प्रेरित किया जीवमात्र को।
अद्यापि पर्यन्त भटकते हुए प्रत्येक के लिए यह परमावश्यक हो गया है कि वह सम्यग्ज्ञान की दिव्य रोशनी को प्राप्त करके अपने लक्ष्य की ओर कटिबद्ध होकर आगे बढे।
ज्ञानदृष्टि के अभाव में वर्तमान जीवन क्लेशमय, पापमय और कष्टमय बनता जा रहा है।
अत: परमसुख और परमशान्ति प्रदात्री वह सम्यग्ज्ञान की रोशनी छोटे-बड़े सभी को मिले!
आज के इस भौतिक युग में वह वृद्ध-युवा, तरुण-तरुणी, किशोर-किशोरी तथा बालक और बालिका सभी के लिए अत्यावश्यक है।

श्री पद्मप्रभ जिन स्तवन (६)

विवेचन - मुनिराज श्री जयानंदविजयजी

(समकित द्वार गंभारे पेसतांजी...ए राग)

पद्मप्रभ जिन पेखतां रे, प्रगटयों समकित प्रेम रे।
मोह महा मद मिट गयो रे। क्षमा ग्रही थयो क्षेम रे। प.॥ १ ॥

भावार्थ : हे पद्मप्रभ जिनेश्वर आपके वास्तविक स्वरुप को देखते ही सम्यग्दर्शन पर प्रेम प्रगट हो गया, अंतर के ज्ञान चक्षु खुल गये, मोहरुपी भयंकर मद् दूर चला गया, जिससे सुखपूर्वक क्षमा रुपी शस्त्र धारणकर क्षेम अर्थात आत्म कल्याण हो गया।

भगवती सूत्र में प्रथम प्रश्न में चलने वाले को चला प्रारंभ को पूर्ण हुआ कहा जा सकता है वैसे ही कल्याण के पथ पर चलने वाले का कल्याण हो गया ऐसा कहा जा सकता है। जिन शासन की यही नय दृष्टि है। जो अपने आप में विशिष्टता लिए हुए है।

भाग्यो मिथ्यात्व भूतड़ो रे, जाग्यो अनुभव जोर रे।
जिन पडिमा ज्योति जगी रे, चेत्यो चारित्र चकोर रे। प. ॥ २ ॥

भावार्थ : आप श्री के दर्शन हो जाने के कारण मिथ्यात्व रुपी भूत हृदय में से भागकर चला गया है। मिथ्यात्व रुपी भूत के कारण ही निज स्वरुप का अनुभव नहीं हो रहा था। इसके भाग जाने से/दूर हो जाने से निज स्वरुप का अनुभव प्रगट हुआ।

निज स्वरुप के अनुभव को चिरस्थायी रखने हेतु जिनेश्वर प्रभु की प्रतिमा इस काल में एक सविशेष पुष्ट कारण होने से जिन पडिमा की पूजा अर्चना में विशेष जागृतता रुप ज्योति जगादी। जिससे चारित्र पालन में विशेष सतर्कता रुप सहायता प्राप्त हुई।

भलहल ज्ञान भानुं भयो रे, दीपी दया दिल दक्ष रे।
सिद्धान्त सार संभालियो रे, लिनो अनुभव लक्ष रे। प. ॥ ३ ॥

भावार्थ : जिन प्रतिमा की पूजा के सामर्थ्य से ज्ञानरुपी सूर्य अतिशय देदीप्यमान होने लगा और दया/करुणा के भाव भक्त के हृदय में दक्षता लिए हुए विशेषता से चमकने लगे एवं सचाचारित्रता पूर्ण पालन करने के प्रयत्न से सिद्धान्त का अवलोकन सूक्ष्मता से हुआ और "छ:जीव निकाय संजय" प्रवचन का सार है" छ: काय के जीवों पर करुणा ही संयम का सार है वही संयम है। इस प्रकार के ज्ञान से छ:जीव निकाय के जीवों पर दया के भाव अनुभव पूर्वक संपूर्ण रूप से प्रगट हो गये। सतत यही लक्ष रहा कि किसी भी प्राणी को दु:ख न हो।

कुमति कुपक्ष कुलिंगीनोरे, पक्ष प्रपंच प्रसंग रे।
नाठो नाग ज्युं मोर थी रे, राच्यो सुमति सुरंग रे। प. ॥ ४ ॥

भावार्थ : भौतिक पदार्थों की लालसा उत्पन्न करने वाली कुमति, ऐहिक सुख को सर्वस्व

मानने वालों का कुपक्ष एवं काष्टाग्नि से, बाल तपश्चर्या से मोक्ष साधन मानने वाले कुलिंगीयों का जो अनादि काल से आत्मा के चारों ओर पक्ष, प्रपंच और प्रशंसा का खेल चल रहा था। वह सर्प तुल्य था। भाग्योदय से श्री पद्मप्रभ जिनेश्वर के दर्शन पूजन रूप मोर की प्राप्ति हो जाने से कुमति, कुपक्ष, कुलिंगी रूप नाग/सर्प भाग गया और भक्त के हृदय में आत्मिक गुणों को प्रगट करने वाली सुमति का प्रगटीकरण होकर आत्मरमणता रूप सुमति का रंग लग गया। अब मेरी आत्मा आत्म रमणता में लयलीन रहने लगी।

भूंडी भव भीती भर्गा रे, जागी सुमति जगीश रे।
सूरि राजेन्द्र नी संपदा रे, जाणी में जगदीश रे। प. ।। ५ ।।

भावार्थ: *हे जगदीश! संसार चक्र में निरंतर परिभ्रमण रूप जो भय था वह सुमति के प्रगट हो जाने से भाग गया/दूर हो गया। समकित रत्न के प्रगट हो जाने से ही सूरि राजेन्द्र अर्थात् पद्मप्रभ जिनेश्वर प्रभु की संपत्ति को जान सका अर्थात् मेरे स्वयं में रही हुई आत्मलक्ष्मी का ज्ञान आपके दर्शन से हुआ।*

मिथ्यात्व के नाश से सम्यक्त्व का प्रगटीकरण सम्यक्त्व के प्रगटीकरण से जिनेश्वर के वास्तविक दर्शन, वास्तविक दर्शन से सद्ज्ञान/विशिष्ट ज्ञान/सुज्ञान एवं सुदर्शन, सुज्ञान से चारित्र का शुद्ध पालन हो सकता है। मिथ्यात्व नाश में जिन पडिमा पूजन का महत्त्व दर्शाया है, इस स्तवन में गुरुदेव श्री ने। सुदर्शन, सुज्ञान एवं सुचारित्र वाले आत्मा में आत्मानुभव विशेष होता है। गुरुदेव श्री ने जिन पडिमा पूजन से होने वाले फल को दर्शाकर आत्मरमणता में निमग्न होने का संकेत दिया है भक्त गण को।

ज्ञान कसौटी उत्तर

(१२४) सजीव (१२५) अर्ध पुद्गल परावर्तकाल (१२६) नहीं (१२७) दो सुर्य एवं दो चन्द्र (१२८) चान्द्रकुल एवं कोटिक गण (१२९) नहीं (१३०) नहीं (१३१) अटूट श्रद्धा (१३२) हाँ (१३३) हाँ (१३४) हाँ (१३५) अव्यक्तरूप से होता है (१३६) सौ (१३७) नौ (१३८) छः (१३९) दो, प्रेरक एवं उदासीन (१४०) राग, द्वेष, मोह, आदि (१४१) आठ/अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य अव्याबाध, अयगाहनत्व, सूक्ष्मत्व और अगुरुलघुत्व (१४२) जिस वस्तू का जो भाव है वही तत्व है (१४३) दो— भावास्रव और द्रव्यास्रव (१४४) पाँच/मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद योग और कषाय (१४५) पन्द्रह (१४६) नहीं (१४७) सशेय, विपर्यय और अनध्यवसाय (१४८) सम्यग्दर्शन (१४९) दो सामान्य और विशेष (१५०) सामान्य अंश को जानना दर्शन है

सत्य सिद्धान्त प्रकाशिका

संकलन - मुनि श्री प्रशान्तरत्न विजयजी

- **प्रवचने पुरुषोत्तरिको धर्म इति पुरुषः प्रमाणम्।** **(व्यवहारसूत्र)**
  जिन प्रवचन में पुरुषप्रधान धर्म कहा हैं, इसलिए पुरुष को ही धर्म में प्रमाण करना।
- **मिथ्यात्व क्षयोपशम जन्यं हि सम्यक्त्वम्।** **(पञ्चलक्षणी प्रकरण)**
  मिथ्यात्व मोहनीय के क्षयोपशम से सम्यक्त्व की उत्पत्ति होती है।
- **नत्थि नएहिं विहूणं सूत्तं अत्थोय जिणमेय किंचि।** **(विशेषावश्यक भाष्य)**
  जिनेश्वर के मत में नय से रहित कोई भी सूत्र एवं अर्थ नहीं हैं।
- **गुरुभक्ति बहुमान भावत एवं चारित्रे श्रद्धा स्थैर्यं च भवति नान्यथा।**
  (पञ्चवस्तु शास्त्र)
  गुरुदेव के प्रति भक्ति एवं बहुमान हो तो ही चारित्र में श्रद्धा एवं स्थिरता प्राप्त होती हैं, अन्यथा नहीं।
- **विरति हिनस्तु श्रुङ्गपुच्छहीनः पशुरेव** **(योगशास्त्र टीका)**
  विरति रहित मनुष्य शींग और पुच्छ रहित पशु ही हैं। विरति याने प्रतिज्ञापूर्वक पापों से निवृत्ति।
- **असठ प्रकृतियो वर्तमानानुरूपं धर्माचरणमनुतिष्ठन्तः साम्प्रत मुनयस्तीर्थंकर काल भावि साधु साधव इव मोक्षफल चारित्रभाजो जायन्ते।**
  (उपदेशपद भाग दूसरा)
  निष्कपट याने शल्यरहित प्रकृतिवाले, वर्तमान काल के अनुरूप चारित्रधर्म का पालन करते हुए तीर्थंकर के समय में हो चूके मुनि के जितने मोक्षफल प्रदाता चारित्र के भागी होते हैं।
- **यथा हि शुक्लपक्ष प्रवेशात प्रतिपच्चन्दमाः परिपूर्ण चन्द्रमण्डल हेतू सम्पद्यते तथा सर्वज्ञाऽऽज्ञानु प्रवेशात तुच्छमप्यनुष्ठानं क्रमेण परिपूर्णानुष्ठान हेतू सम्पद्यते इति।**
  (उपदेश पद)
  जैसे शुक्लपक्ष में प्रविष्ट हुआ चन्द्रमा क्रमशः पूर्णचन्द्रमंडल का हेतू बनता हैं, वैसे ही सर्वज्ञ की आज्ञा में किया हुआ सामान्य धर्मानुष्ठान भी क्रमशः पूर्ण अनुष्ठान का हेतू बनता हैं।
- **पंचिंदिया मणुस्सा एगनर भुत्तनारि गण्भंमि उक्कोसे नवलक्खा जायन्ति एगहेलाए**
  (उपदेश प्रासाद)
  एक पुरुष से एक बार ही भुगती हुई नारी के भर्ग में एक साथ उत्कृष्ट से नौ लाख मनुष्य उत्पन्न हो सकते हैं।
- **सावध आरम्भमये कार्ये सुकृतादि वचनं न वदेत्** **(भाषा रहस्य)**
  आरम्भमय सावद्य (पाप) कार्य में यह सुकृत (अच्छा कार्य) हैं, ऐसा बोलना नहीं चाहिए।
  सुकृत कहकर अनुमोदना करने पर भी हम पाप के हिस्सेदार बन जाते हैं।

❀ **आत्मीय परकीयो वा कः सिद्धान्तो विपश्चिताम् दृष्टेष्टाबाधितो यस्तु युक्तस्तस्य परिग्रहः।** **(योग बिन्दु प्रकरण)**

विद्वानों को कौन सा सिद्धान्त अपना और कौन सा पराया? दृष्ट एवं इष्ट से जो अबाधित सिद्धान्त हों उन्हीं का वे स्वीकार करतें हैं।

दृष्ट = प्रत्यक्ष प्रमाण इष्ट = अनुमान प्रमाण

❀ **सुकृतं वर्धते सम्यक् परपुण्य प्रशंसया।**
आत्मस्तुत्यन्यनिन्दाभ्यां हीयते सुकृतं निजम्॥

सम्यग् प्रकार से पर के पुण्य की प्रशंसा से सुकृत बुद्धि पाता हैं, आत्म-प्रशंसा एवं परनिंदा से स्व सुकृत की हानि होती हैं।

❀ **स्तुतः प्रसीदति रोषमवश्यं स याति निन्दायाम्। (उपमिति भव प्रपञ्चा कथा)**

स्व की स्तुति से जो व्यक्ति प्रसन्न होता है, वह अवश्य अपनी निन्दा में रोष (क्रोध) पाता है।

❀ **रक्खंतो जिण दर्ण्वं, तित्थयरस्तं लहइ जीवो**
भक्खंतो जिणदत्वं, अणंत संसारिओ होई। **(द्रव्य सप्ततिका)**

देवद्रव्य का रक्षक जीव तीर्थंकर नामकर्म को उपार्जित करता है, जिनद्रव्य का भक्षक अनंत संसार की वृद्धि करता है।

❀ **अभ्यर्चनादर्हतां मनः प्रसादस्ततः समाधिश्च।**
तस्मादपि निः श्रेय समतो हि तत्पूजनं न्याय्यम्॥ **(तत्वार्थ कारिका)**

अरिहंत के पूजन से चित्त कर प्रसन्नता होती हैं, चित्त प्रसन्नता से समाधि की प्राप्ति, समाधि से मोक्ष की प्राप्ति होती हैं, इसलिए जिनपूजा श्रेयस्कर हैं।

❀ **तत् संसारे स्थानमेव नास्ति यत्र जरा मृत्यु न स्तः।** **(आचारांग सूत्र)**

संसार में ऐसा कोई स्थान नहिं जहाँ वृद्धावस्था एवं मृत्यु की उपस्थिति न हो।

(आगम अनुप्रेक्षा से सानुवाद)

अब उपलब्ध है : आज ही मंगवाये

जैनागमों से ली गयी २५० सूक्तियाँ, उनका सरलार्थ व विवेचन

चिन्तनकार

साहित्य मनीषी, तीर्थप्रभावक, मधुरव्याख्यानी

वर्तमानाचार्यदेव श्रीमद्विजय जयंतसेनसूरीश्वरजी 'मधुकर'

द्वारा लिखीत.

भगवान महावीर ने क्या कहा ?

लेजर टाइपसेटिंग, चार रंगी कवरपृष्ठ के साथ ऑफसेट में मुद्रित

पक्की बायडींग के साथ द्वितीय संस्करण प्रकाशित हो गया है।

मूल्य — बीस रुपये + पोस्टेज तीन रुपये

प्राप्ति स्थान : शाश्वतधर्म कार्यालय, जामली नाका, थाने-४००६०१

मरने वालों के लिए

■ मुनि श्री विमलसागरजी

मृत्यु हमारी उपलब्धि भी हो सकती है और हमारी मजबूरी भी। दोनों के बीच हम निर्णायक है। कैसे और कहाँ जन्म लेना यह हमारे हाथों में नहीं है। किन्तु कैसे मरना यह हमारे हाथों में है, कुल मिलाकर मृत्यु हमारे इहलौकिक सफर की अन्तिम व अपरिहार्य घटना है.

आचार्य श्री पद्मसागरसूरीश्वरजी म.सा. के विद्वान शिष्यरत्न युवा मुनि प्रवर श्री विमलसागरजी म. प्रभावशाली प्रवचनकार ही नहीं, उदीयमान लेखक भी है. आगामी माह उनकी एक कृति 'मरने वालों के लिए' प्रकाशित होने जा रही है.
यहाँ प्रस्तुत है 'शाश्वत धर्म' के पाठकों के लिए विशेष रुप से उपलब्ध कराए गए उस अप्रकाशित पुस्तिका के कुछ महत्वपूर्ण व मननीय अंश, जो कि न सिर्फ जीना ही सिखाते हैं अपितु मृत्यु का भी मार्ग प्रशस्त करते है. संपादक

आदमी
अथक परिश्रम कर
बहुत कुछ अर्जित करता है।
किन्तु
मृत्यु क्षणभर में उसके लिए
इन सब का अन्त कर देती है.
मृत्यु शाश्वत प्रश्नचिन्ह है
आदमी की
समस्त भौतिक उपलब्धियों पर

हमारे पास
ऐसा कोई विकल्प नहीं है कि
या तो मरो,
या फिर मत मरो.
अगर ऐसा विकल्प होता
तो हम निश्चित ही दूसरे को चुनते.
हम कहते
कि फिलहाल हमें नहीं मरना है,
लेकिन अफसोस!
मृत्यु अवश्यम् भावी है.
न मरने की धारणा तो
अज्ञानता है.

मृत्यु के माध्यम से ही जीवन को
पहचाना जा सकता है.
इसके अतिरिक्त
अन्य किसी भी तरीके से
जीवन को जान पाना असम्भव है.
जो अन्य माध्यमों से
जीवन को जानने की चेष्टा करते हैं,
वे जान तो कुछ नहीं पाते,
केवल
जीवन को बरबाद ही करते है.

मित्र की खोज में
मैंने पूरा शहर ढूंढ़ डाला
परन्तु
मित्र कहीं नहीं मिला.
अन्त में मैंने एक सन्त से पूछा
तो उन्होंने श्मशान का पता बतलाया.
मैं वहाँ भी गया
पर निराश होकर पुनः लौटा.
कोई वहाँ नजर नहीं आया.
मैंने सन्त को हकीकत बतलाई
तो वे बोले :-

'यहाँ कहाँ-कहाँ खोजोगे ?
वहीं प्रतीक्षा करो.
एक - न एक दिन सभी वहीं आने वाले हैं.'

संसार एक रैन बसेरा है.
यह एक मेले से अधिक कुछ नहीं है.
मेला लगता है.
भीड़ जमा होती है. मेले में हम भी होते है.
खूब चर्चाएँ होती है.
चर्चाओं में कभी हमारा भी जिक्र होता है.
सांझ ढ़लती है.
पुनः मेला लगता है.
भीड़ जमा होती है.
खूब चर्चाएँ होती है.
चर्चाओं में हमारा जिक्र भी होता है.
पर अफसोस ! उस दिन हम नहीं होते.

घरों के नाम हम गजब रखते है.
नमूने देखिए.
'गुलशन' 'गुलमोहर'
'आकाश' 'अभिमान'
'सम्राट' 'शहनशाह' इत्यादि.
दरअसल इनसे
जीवन को कोई सन्मार्ग नहीं मिलता.
बेहतर होता
कि जीवन की क्षणभंगुरता को.
महसूस करने के लिए
'धर्मशाला'
'सरायखाना'
'रैनबसेरा'
जैसे नाम रखते.

जिसकी जीवेषणा जितनी तीव्र होती है,
वह उतनी ही तकलीफ से मरता है.
यह तो ठीक ऐसी हालत है
जैसे
एक दस दिन के भूखे-प्यासे
भिखारी के हाथ
बमुश्किल लगी
रुखी-सुखी रोटी को भी
झपट कर छीन लेना
और उस स्थिति में वह लाचार
रोने-चिल्लाने व तड़फने के अतिरिक्त
कुछ भी करने में असमर्थ हो

मैंने कितने ही ऐसे लोगों को देखा है,
जो स्वयं को नास्तिक बतलाते थे.
जिन्दगी भर उन्होंने
भगवान पर व्यंग कसे,
जमकर उन्हे गालियाँ दी,
लेकिन जब वे मरने को हुए
तो मैंने उनको तड़फते पाया.
वे जोर- जोर से रोते,
बार- बार भगवान को पुकारते.
मैंने महसूस किया
कि बड़े से बड़ा नास्तिक भी
मौत को सामने देखकर
आस्तिक बन जाता है.
जब कोई उसे बचा नहीं पाता
तो भगवान याद आते है.

सिकन्दर की मृत्यु के बाद
उसकी माँ रोती हुई कब्रिस्तान आई.
पुत्र के वियोग में
वह जोर-जोर से चिल्लाने लगी.
आधी रात व्यतीत हो चुकी थी.
कब्रिस्तान का रखवाला बोला.
'मॉजी, इतनी रात में यहाँ क्यों रो रही हो ?'
'वह बोली. 'मेरा बेटा सिकन्दर यहाँ आया
उससे मिलने आई हूँ.'
रखवाले ने पूछा 'कौन सिकन्दर ?'
उसने प्रत्युत्तर दिया : 'तुम नहीं पहचानते ? अरे !
दुनिया का बादशाह सिकन्दर !
रखवाला मुस्कराते हुए बोला.
'माँजी, पुनः लौट चलो.
यहाँ तो कितने ही
बादशाह और सिकन्दर सोये हैं.
तुम किस-किस को खोजोगी ?'

प्रकृति द्वन्द की व्यवस्था है.
जो निर्मित होता है,
उसका विध्वंस भी होगा.
जो उदित हुआ है,
वह अस्त भी होगा.
जो जन्म लेता है,
वह निश्चित मरेगा.

श्रावस्ती की विरल विभूति

श्री नैनमल सुराणा 'खुशदिल'

फाल्गुन मास की अष्टमी का पावन दिन मानो धरा पर एक अभिनव प्रकाश की किरण लेकर उपस्थित हुआ। महारानी सोनादेवी चौदह स्वप्न देखकर सहसा जग गई। उसके हृदय में मानो हर्ष की हिलोर उठ रही थी। वह उठकर महाराज जितारि के कक्ष में पहुँची। उसका हृदय पता नहीं क्यों हर्ष से फूला नहीं समा रहा था। किसी अज्ञात हर्ष ने उसे मानो विह्वल कर दिया था।

महारानी सोना ने राजा को चौदह स्वप्न सुनाये । राजा स्वयं हर्ष विभोर हो गया। उसने कहा,'' देवी तुम सचमुच भाग्यशालिनी हो। स्वप्नों के प्रभाव से तुम एक ऐसे राजकुमार को जन्म दोगी जिसकी तीनों लोकों में पूजा- उपासना होगी। तुम्हारे कथनानुसार मृगशिर नक्षत्र में चन्द्रमा का योग आने पर तुम्हे स्वप्न आये हैं। अत: तुम्हारी कुक्षि से कोई तेजस्वी विरल विभूति अवतीर्ण होगी जो तीनों लोकों में ज्योति बन कर विश्व को एक नवीन दिशा देगी

रानी गद्‌गद् हो गई। उसका मन-मयूर नृत्य कर उठा। आज उसका मन उसके बस में नहीं था। महारानी सोनादेवी गुणवान थी। लोग उसे महाराजा जितारि का सेनापति ही मानते थे।

इन्द्रों का आसन काँप उठा। राजा विपुलवाहन का जीव देव-आयु पूर्ण होने पर महारानी सोना के गर्भ में आया। सुरेन्द्र देवताओं कों साथ लेकर तुरन्त वहाँ आये और उन्होंने च्यवन-कल्याणक का महोत्सव किया। क्षण भर के लिये तो नरक के जीव भी सुख का अनुभव करने लगे।

इन्द्र ने महारानी का अभिवादन किया और कहा,''स्वामिनी! इस अवसर्पिणी काल में विश्व-वंद्य, जगत के स्वामी तीसरे तीर्थंकर आपकी पावन कुक्षि से जन्म लेकर जन-जन का कल्याण करेंगे।''

यह समाचार सुनकर महारानी को इतना हर्ष हुआ जितना हर्ष मेघ की गर्जना सुनकर मोरनी को होता है। स्वप्नों का वास्तविक फल प्राप्त करने के लिये रानी ने शेष रात्रि जागकर ही व्यतीत की।

नौ माह और साढ़े सात दिन व्यतित होने पर मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशी के दिन कंचन वर्ण एवं अश्व लंछन युक्त तेजस्वी कुमार का जन्म हुआ। जन्म होते ही तीनों लोकों के अंधकार को विदीर्ण करनेवाली ज्योति जगमगा उठी। नरक के जीव क्षण भर लिये गद्‌गद् हो गये। उच्च स्थान पर पहुँचे हुए समस्त ग्रह मानो आधि, व्याधि और उपाधि को; चुनौती देने लगे। दिशाऐं प्रसन्नता से नृत्य कर उठीं। शीतल, मन्द सुगन्धित वायु अठखेलियाँ करने लगी। गगन में जयघोष हुआ और सुरभित जल-वृष्टि होने लगी। गगन् में देव दुन्दुभि की ध्वनि सबका मन मुग्ध करने लगी। धरातल पर मानों शान्ति सी छा गई।

छप्पन दिक्कुमारियाँ आकर नव-जात कुमार की सेवा में लग गई। प्रात: होते ही महाराजा जितारि ने प्रभु का जन्मोत्सव किया। सम्पूर्ण नगर में शहनाइयाँ बज उठी। राजमहल गीतों की मंगल ध्वनि से गूँज उठा। यत्र-तत्र सन्नारियाँ मंगल गीत गाने लगी।

ढोल, नौबत और शहनाइयों की ध्वनि से नगर का वातावरण हर्षोल्लास से परिपूर्ण हो गया। यही राजकुमार हमारे तृतीय तीर्थंकर भगवान श्री संभवनाथ हुए,जिन्होंने अपनी दिव्य प्रभा से तीनों लोकों को प्रभावित किया।

यह भगवान का तीसरा भव था। पहले भव में राजा विपुलवाहन थे और दूसरे भव में आप नवें देवलोक में 'आनत' नामक देव थे। पहले भव में ही विपुलवाहन ने राजा के रूप में विकराल अकाल-ग्रस्त जनता को बचाने के लिये अपना राज्य-कोष निर्धनों के लिये लुटा दिया और सम्पूर्ण राज्य की अच्छी तरह सेवा की, जिसके फल स्वरूप आपने तीर्थंकर नाम-कर्म उपार्जित किया और भगवान श्री संभवनाथ के रूप में हमारे पूज्य बन गये।

भगवान का बाल्यकाल आनन्द में व्यतीत हुआ। युवावस्था में श्रावस्ती नगरी के राजकुमार का विवाह एक योग्य राजकुमारी के साथ कर दिया गया। आपने एक कर्त्तव्यनिष्ठ छत्रपति राजा के रूप में जनता पर मधुर शासन किया। आप महान् ज्ञानी, विद्वान एवं कुशल नृप थे। आपके ज्ञान से अनेक विद्वान प्रभावित थे।

आपके पिता महाराजा जितारि ने पन्द्रह लाख पूर्व तक भोग भोगने के पश्चात् संयम अङ्गीकार किया और प्रभु का राज्याभिषेक किया। आपने चंवालिस लाख पूर्व और चार पूर्वाङ्ग तक राज्य का उपभोग किया (एक पूर्वाङ्ग चौरासी लाख वर्ष का होता है)।

हमारे चरित्र-नायक भगवान श्री संभवनाथ तीन ज्ञान के धारक थे। एक बार जब वे एकान्त में बैठे थे तब उनके हृदय में विचार आया, "यह संसार कितना असार है? यह विष-मिश्रित मिष्ठान्न भोजन के समान है, स्वादिष्ट होते हुए भी प्राण-घातक है। उसर भूमि में अन्न उत्पन्न नहीं हो सकता। हमें यह अमूल्य मानव-जन्म अत्यन्त कठिनाई से प्राप्त हुआ है। प्रबल पुण्योदय से ही हमारा इस योनि में जन्म हुआ है। दुर्लभ मनुष्य-जन्म पाकर भी जो मनुष्य इसे व्यर्थ खो देता है, आत्म-साधना नहीं करता, वह संसार में अत्यन्त अभागा है। अमृत पाकर जो व्यक्ति उसे पाँव धोने में नष्ट कर देता है, उसके समान मूर्ख भला कौन होगा? इस अमूल्य जीवन को भोग-विलास में ही नष्टकर देना मानो रत्न पाकर कौओं को खिला देना है। मुझे अब सचेत हो जाना चाहिये। मैं इस प्रकार भोगों में लिप्त होकर क्यों पड़ा रहूँ?

संभवनाथ मानो चौंक गये। वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ से बने सोचते रहे, "मुझे कौन सा मार्ग ग्रहण करना चाहिये? मैं किस प्रकार स्वयं को इस चौरासी लाख जीव-योनि के परिभ्रमण से बचा सकता हूँ? मैं आवागमन से मुक्त कैसे हो सकता हूँ?

संभवनाथ वैराग्य की लहरों में झूमने लगे। उन्होंने निश्चय कर लिया कि "मैं अब इन नश्वर प्रलोभनो में फँसा नहीं रह सकता। मुझे अपनी साधना पुकार रही है। मुझे अपना कर्त्तव्य पुकार रहा है। मैं वीतराग बनूँगा। मैं अब यह आवागमन का फेरा मिटा कर रहूँगा। मेरे मार्ग के कण्टक मैं स्वयं दूर करूँगा।

फिर क्या था? वे निकल पड़े विरक्ति की ओर। उन्होंने वर्षीदान दिया। सहसाम्र वन में आकर मार्गशीर्ष शुक्ला पूर्णिमा के दिन सांध्य वेला में उन्होंने पंच-मुष्टि लोच किया; इन्द्र द्वारा दिया गया देवदूष्य वस्त्र धारण कर सर्व सावद्य योगों का उन्होंने परित्याग कर दिया। चारों ओर जय-ध्वनि हुई। लोग जय-जयकार कर उठे। भगवान संभवनाथ ने संयम का

पावन पथ ग्रहण किया।

इन्द्रादि देवों ने उनका तप-कल्याणक मनाया, समवेत स्वर में उनकी स्तुति की और वे अपने-अपने स्थान पर चले गये। दूसरे दिन भगवान ने सुरेन्द्र नृप के राजमहल में पारणा किया।

चौदह वर्षों की कठोर तपस्या के पश्चात् कार्तिक कृष्णा पंचमी के दिन उन्हें केवलज्ञान हुआ, देवताओं ने उनके लिये समवसरण की रचना की। उस समय भगवान ने वहाँ प्रथम देशना दी। उनकी पियूष वाणी सुन कर वैराग्य का मानो स्त्रोत प्रवाहित हो गया। विरक्ति के प्रवाह में उस समय अनेक व्यक्तियों ने दीक्षा अङ्गीकार की।

भगवान की देशना के अमिट प्रभाव से अनेक लोग वैराग्य की ओर उन्मुख हुए। चारू आदि गणधरों को भगवान ने स्थिति, उत्पाद और नाश - इस त्रिपदी का उपदेश दिया। त्रिपदी का अनुसरण करके १०२ गणधरों ने चौदह पूर्व सहित द्वादशांगी की रचना की। भगवान ने उन पर वासक्षेप डाला।

संभवनाथ भगवान के शासन के अधिष्ठाता त्रिमुख देवता और दुरितारी देवी थी। श्याम वर्ण युक्त उस देवता के तीन मुँह, तीन नेत्र एवं छः हाथ थे, जिसका वाहन मयूर था। दुरितारी देवी चार भुजाओं वाली थी, जिसकी सवारी मेष की थी। देवी गौर वर्ण थी।

भगवान के परिवार में १०२ गणधर, दो लाख साधु, तीन लाख दो हजार एक सौ पचास चौदह पूर्वधर, नौ हजार छः सौ अवधिज्ञानी, बारह हजार एक सौ पचास मनःपर्यव ज्ञानी, पन्द्रह हजार केवलज्ञानी, उन्नीस हजार आठ सौ वैक्रियक लब्धिसम्पन्न, बारह हजार वादी, दो लाख तेराणवे हजार श्रावक और छः लाख छत्तीस हजार श्राविकाएँ थी। केवलज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् भगवान ने चार पूर्वाङ्ग और चौदह वर्ष कम एक लाख पूर्व तक भगवान् विभिन्न स्थानों पर विहार करते रहे। स्थान-स्थान पर दी गई देशना ने मनुष्यों का हृदय परिवर्तन दिया।

वे तो केवलज्ञानी थे। उन्हें अपने ज्ञान से अपना निर्वाण समीप प्रतीत हुआ। भगवान सपरिवार समेतशिखर पर पधार गये। जब निर्वाण-काल ही समीप है तो भोजन की क्या आवश्यकता? वहाँ एक हजार मुनियों के साथ भगवान ने पादोपगमन अनशन किया। इन्द्र आदि सुर गण उनके चरणों की सेवा में जुट गये। ऐसे केवलज्ञानी की भक्ति करने का लाभ भी प्रायः बिरलों को ही प्राप्त होता है।

अन्त में प्रभु ने सर्वयोग के निरोधक शैलेशी नामक ध्यान को समाप्त किया। गगन-मण्ड़ल में एक विलक्षण ध्वनि हुई और चैत्र शुक्ला पंचमी की पुन्य वेला में भगवान निर्वाण पद को प्राप्त हुए। उस समय उनके साथ एक हजार मुनियों ने मुक्ति का वरण किया। देवताओं ने भगवान के निर्वाण का महोत्सव किया।

सूचना
शाश्वतधर्म कार्यालय के टेलीफोन नंबर में परिवर्तन
कृपया नया नंबर ध्यान रखें- 5340724

ज्ञान-कसौटी-६

संकलन : महेन्द्र जे. संघवी

(स्वाध्यायी पाठक निम्नंकित प्रश्नो के उत्तर पहले क्रमशः कागज पर लिखें, फिर इस अंक में पृष्ठ 10 पर दिये गये उत्तरो से मिलान करे/- संपादक)

(१२४) सिद्धधशिला सजीव है या निंजीव ?

(१२५) समाधिमरण की एक बार प्राप्ति हो जाये तो उसका संसार कितना रह सकता है ?

(१२६) क्या पंचम आरे में जन्मे हुए को केवल ज्ञान हो सकता है ?

(१२७) जबुंद्वीप मे सूर्य और चन्द्र की संख्या कितनी है ?

(१२८) त्रिस्तुतिक गच्छ का कुल कौन सा है ?

(१२९) समवसरण में गणधर भगवन देशना रे उस समय केवली भगवंत वन्दनादि करे ?

(१३०) भगवंत के निर्वाण कल्याणक के समय में देवताओं द्वारा अग्निसंस्कार के समय में गणधर मुनि भगवंत उपस्थित रहते है ?

(१३१) श्री श्रेणिक महाराज ने तीर्थंकर नाम गोत्र, व्रत न होते हूये भी कैसे बंधा ?

(१३२) क्या तीसरी नरक में किसी देव का च्यवन हो सकता है ?

(१३३) क्या स्त्री अनुत्तर विमान में जा सकती है ?

(१३४) क्या स्त्री केवली समुद्धघात करती है ?

(१३५) प्रदेशोदय अव्यक्त रुप से होता है या व्यक्त रुप से है ?

(१३६) तीर्थंकर कितने इन्द्रों से वन्दनीय है ?

(१३७) जीव का वर्णन कितने अधिकारो में किया गया है ?

(१३८) पर्याप्ति कितने प्रकार की होती है ?

(१३९) निमित्त कितने प्रकार के होते है ? तथा कौन-कौनसे ?

(१४०) भाव कर्म कौन-कौन से है ?

(१४१) सिद्ध भगंवतो के कितने गुण होते है ? तथा कौन कौन से है ?

(१४२) तत्व क्या है ?

(१४३) आस्त्रव कितने प्रकार के होते है ?

(१४४) भावास्त्रव के कितने भेद होते है तथा कौन कौनसे ?

(१४५) प्रमाद के कितने भेद है ? कौन-कौनसे ?

(१४६) क्या संसार के सभी जीव मोक्ष प्राप्त कर सकते है ?

(१४७) सम्यक् ज्ञान में कौन से दोष नहीं होते है ?

(१४८) आत्मा का वास्तविक स्वरुप क्या है ?

(१४९) किसी भी पदार्थ में कितने अंश पाये जाते है ?

(१५०) दर्शन किसे कहते है ?

सौन्दर्य शरीर में नहीं आत्मा में

डॉ. शकुंतला तंवर

मूल्यहीन राजनीति और कृत्रिम जीवन आदर्शों ने व्यक्ति के जीवन में जो खोखलापन उत्पन्न किया है उससे मनुष्य का शारीरिक और मानसिक सौन्दर्य नष्ट हुआ है। घृणा, विद्वेष, हिंसा, क्रोध आज व्यक्ति के उस सौन्दर्य को सुखा गये हैं जो पहले संतोष और तृप्ति के कारण उसके मुख पर आनन्द की लहरें लेता था। नैतिकता के अभाव में व्यक्ति न तो शांति की सांस ले सकता है न ही सुख की नींद सो सकता है।

भोगवादी संस्कृति के युग में देहात्मबोध के प्रति बहुत जागृति हो गई है। व्यक्ति का पूर्ण ध्यान शरीर के बाह्य सौन्दर्य पर स्थिर हो गया है। बहिर्मुखी दृष्टि स्थूल वस्तुएँ एवं स्थूल सौन्दर्य को देख रही है और उसका ध्यान आन्तरिक सौन्दर्य तथा सौन्दर्य के वास्तविक स्रोत की ओर नहीं जा रहा। व्यक्ति अपने आप को सुन्दर दिखाना चाहता है यह अनुचित और निन्दनीय नहीं क्योंकि सौन्दर्य से भी तृप्ति और संतोष मिलता है। मन आल्हादित और प्रसन्न होता है किन्तु स्वयं को सुन्दर दिखाने के लिये गलत मापदण्ड अपनाना हास्यास्पद और सोचनीय है। दैहिक सौन्दर्य, त्वचा का सौन्दर्य आज व्यक्ति के आकर्षण का केंद्र बन गया है और इसक परिणाम है गली-गली में खुले रहे ब्युटी पार्लर। त्वचा का सौन्दर्य स्थायी है क्या? नहीं, तो फिर उसी को सजाने संवारने के लिये दुनिया इतनी पागल और अंधी क्यों हो रही है? गली-गली में खुल रहे सौन्दर्य प्रसाधन केन्द्र हमारी रूग्ण मानसिकता के परिचायक नहीं तो क्या है? जिस देश में सामान्य जन के लिए दो वक्त का भोजन जुटाना कठिन हो वहाँ के लोग सौन्दर्य वृद्धि के लिए उच्च सामंती वर्ग का अन्धानुकरण कर अपना मेहनत का पैसा बहायें यह बुद्धि का दिवालियापन नहीं तो और क्या है?

प्रश्न है क्या पहले लोग सुन्दर नहीं होते थे? होते थे, अवश्य होते थे किन्तु इसके लिये उनकी दिनचर्या भिन्न कोटि की थी। उनका सीधा सम्बन्ध श्रम संस्कृति से था। श्रम जो व्यक्ति को शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ और योग्य बनाता है और 'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन रहता है,' का उदाहरण प्रस्तुत करता है। वैज्ञानिक अविष्कारों से उपलब्ध सुख एवं विलासिता के साधनों ने आज व्यक्ति की दिनचर्या को पूर्णत: बदल कर रख दिया है परिश्रम की आदत छूट गई है। दिनचर्या में नियमित कुछ भी नहीं रहा। स्नान-ध्यान, पूजा, भोजन, विश्राम सभी के नियम नियत समय पर पूरे किये जाने चाहिए किन्तु यह अब अनिवार्य नहीं रहा। परिणाम सामने है। रुग्ण शरीर को लेकर आज की समूची मानवता जैसे सांसो का बोझ ढो रही है।

आज न केवल तन ही बल्कि मन भी रोगग्रस्त और रोगी मन तन को रोग पूर्ण बना ही देता है। कहा जाता है कि प्रत्येक रोग का जन्म पहले मन में होता है तब वह शरीर में परिलक्षित होता है। मन की रुग्णता के लिये आज की भौतिकवादी प्रतिस्पर्धा जिम्मेदार है। व्यक्ति का मूल्यांकन जहाँ भौतिक सुख-सुविधाओं से सम्पन्न व्यक्ति के लिए श्रेष्ठता की दृष्टि से किया जा रहा है वहीं साधनहीन व्यक्ति आत्महिनता, हीनता बोध एवं कुंठा से ग्रस्त है। ईमानदार को बेचारा कहकर तिरस्कृत किया जा रहा है। विसंगति एवं विषम

परिस्थितियों में अर्थाभाव के कारण व्यक्ति की मन:स्थिति स्वस्थ नहीं रही इसलिये धन सम्पन्न होने के लिये या तो वह बेईमानी का आश्रय लेता है या दहेज के प्रति लालच का भाव रखता है।

मूल्यहीन राजनीति और कृत्रिम जीवन आदर्शों ने व्यक्ति के जीवन में जो खोखलापन उत्पन्न किया है उससे मनुष्य का शारीरिक और मानसिक सौन्दर्य नष्ट हुआ है। घृणा, विद्वेष, हिंसा, क्रोध आज व्यक्ति के उस सौन्दर्य को सुखा गये हैं जो पहले संतोष और तृप्ति के कारण उसके मुख पर आनन्द की लहरें लेता था। नैतिकता के अभाव में व्यक्ति न तो शांति की सांस ले सकता है न ही सुख की नींद सो सकता है। अत: नैसर्गिक अकृत्रिम सौन्दर्य ने उसका दामन छोड़ दिया है। व्यक्ति हर समय किसी न किसी इच्छा के पूरा न होने के कारण अतृप्ति के भाव से कुंठित और उद्विग्न रहता है परिणाम है व्यक्ति अपने आप से ही अजनबी हो गया है, अपनों के बीच अजनबी हो गया है। उसकी पहचान मिटती जा रही है। ऐसा आत्म निर्वासित व्यक्ति कैसे संतुष्ट रह सकता है। चिन्तन के क्षण उसे समझा सकते हैं। आत्म संवाद से वह अपनेपन की पहचान स्थापित कर सकता है किन्तु गतिमय संसार में उसकी स्थिति उस नाव की भाँति है जो चंचल मन की तरंगों से थपेड़े तो खा रही है किन्तु अपने गंतव्य से रहित है।

प्रतिस्पर्धा एवं प्रतिद्वन्दिता ने नैतिक मान्यताओं का ह्रास कर दिया है। सात्विक खान-पान और सात्विक विचारधारा दोनों ही से जीवन का सम्बन्ध कट गया तब जीवन सौन्दर्यपूर्ण हो तो कैसे हो? युग परिवेश व्यक्ति की मान्यताओं और विश्वासों को प्रभावित करता है। जीवन में अन्याय के पथ पर चलने वाले मंजिल पर खड़े होकर विजयश्री की शोभा से सम्पन्न हैं और न्याय के पथ का अनुसरण कर चलने वाले मार्ग में ही क्लांती एवं अविश्वास का दामन थामे है। मंजिल पर पहुँचने का जब विश्वास ही नहीं तो पैर तो थकने ही हैं। युग ने व्यक्ति का दृष्टिकोण पदार्थवादी बना दिया है पहले सादगी सौन्दर्य का पर्याय थी अब तड़क भड़क ही सौन्दर्य का मापदण्ड है। सादगी को पिछड़ापन एवं अकृत्रिमता को फूहड़पन माना जाने लगा है। परिवर्तित दृष्टिकोण ने देह के सौन्दर्य का आकर्षण उत्पन्न किया है। हमारा ध्यान आत्मिक सौन्दर्य की ओर क्यों नहीं जाता? उत्तर है हम अपने को नहीं जानते, हम अपनी-परिभाषा सही नहीं कर सकते। हम अपने को शरीर समझते हैं। वही हमारी भ्रमित दृष्टि है। विज्ञापन के युग में देह सौन्दर्य का जितना प्रचार-प्रसार हुआ है उसने हमारी नैतिक मान्यताओं को नष्ट कर दिया है। तथा आध्यात्मिक मूल्यों को विघटित कर दिया है।

आज के व्यक्ति की सारी मानसिकता चलचित्र एवं दूरदर्शन के कार्यक्रमों से निर्धारित हो रही है। पहले व्यक्ति कभी-कभी चलचित्र देखता था। आज घर बैठे दूरदर्शन द्वारा न जाने कितनी प्रकार के कार्यक्रमों का अवलोकन प्रतिदिन करता है। परिपक्व मस्तिष्क तो उससे प्रचारित अच्छे-बुरे प्रचार में भेद कर भी लें किन्तु बालक एवं किशोरों के कच्चे मानस में यह भेद कैसे प्रविष्ट हो सकता है। इसलिये आज असंतुलित मन:स्थिति दिखाई देती है। वास्तविकता एवं बनावटीपन में पार्थक्य रेखा खींचना मुश्किल हो गया है। जीवन का जैसा कृत्रिम रूप इनके द्वारा दिखाया जाता है वह व्यक्ति के सोच को वास्तविकता से दूर कर

देता है। वह यथार्थ से सामंजस्य स्थापित प कर पाने के कारण द्वन्द्वात्मक परिस्थिति में आत्मघात करता है या नैतिकता का मार्ग छोड़कर अकरणीय कार्यों में संलग्न होता जाता है।

व्यक्ति केवल शरीर से ही नहीं कार्यों से सुन्दर लगता है। एक सुन्दर कहा जाने वाला व्यक्ति यदि कठोर और अमर्यादित भाषा का प्रयोग करता है, क्रोध का अनुचित प्रदर्शन करता है, घृणा और हिंसा के कार्य करता है तो हमारे मन में उसकी छवि सौन्दर्य प्रतिमान के रूप में नहीं अपितु उपेक्षित और रिस्कृत रूप में उपस्थित होगी। हम उसके सामने पड़ने से भी कतरायेंगे। अतः सौन्दर्य तो गुणों से सुन्दर लगता है। इसलिये आवश्यकता है सम्पूर्ण मानव जाति को गुणात्मक सौन्दर्य से सम्पन्न करने की।

जन्म जन्मान्तर के सिद्धान्त में विश्वास करने वाली, भारतीय दार्शनिक विचारधारा आत्मा की शुद्धता, पवित्रता एवं निष्कलुषता में आस्था रखती है और इसके लिए उसे नैतिकता का सहारा लेना होता है। बिना नीति के जीवन को चलाना पशुवत जीना है। आज पुनः आवश्यकता है देह से आत्मा के प्रति प्रस्थान की, स्थूल से सूक्ष्म के प्रति चिन्तन की तथा बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी दृष्टि-बोध की तभी सौन्दर्य का सही वरण हो सकता है। बिना आत्मा के देह निष्प्राण है। आत्मा अर्थात प्राण से ही हम जीवन्त हैं। आत्मा के आन्तरिक सौन्दर्य को निखारा जाये। सद्गुणों का सम्बल ही आत्मिक सौन्दर्य का प्रकाश फैला सकता है।

प्रकृति प्राण सहचरी है। हमारी संवेदनाओं एवं कोमलताओं का संरक्षण करती है किन्तु उसी प्रकृति से मुंह मोड़ लेने के कारण हमारा सौन्दर्यबोध जीवन के प्रति एवं मानवीय गुणों के प्रति कुंठित हो गया है नगरीय जीवन की शुष्कता एवं नीरसता ने सौन्दर्य बोध को झुलसा दिया है। अतः जो नैसर्गिक सौन्दर्य चेहरे पर दिखाई देना चाहिए दिखाई नहीं देता जो जीवन की थकान में संजीवनी की स्फूर्ति का कार्य करे।

प्रेरक कथा :

स्थायी दान

राज सौगानी

माधवराव पेशवा अपने जन्म दिन पर दान कर रहे थे। अन्न, वस्त्र, स्वर्ण, सभी कुछ था, किन्तु एक ब्राह्मण कुमार ने इन्हें लेने से इन्कार कर दिया। चौंक कर पेशवा ने पूछा, "क्यो! तुम्हें किस प्रकार का दान चाहिए?"

गम्भीरता पूर्वक उसने जवाब दिया—"हुजूर! इन नाशवान वस्तुओं की बजाय मुझे स्थायी दान देने की कृपा करें।"

अचरज में पड़े पेशवा को कुछ समझ में नहीं आ रहा था। उन्होंने उसे स्पष्ट करने को कहा।

कुमार ने कहा—"स्थायी दान है विद्या। अतः मुझे यह दान पाने की आकांक्षा है!"

पेशवा ने इस कुमार को काशी पढ़ने के लिए भेजा। यही कुमार आगे चलकर प्रसिद्ध न्यायाधीश राम शास्त्री हुआ।

भावना से स्पर्शित नैतिकता धर्म है

श्री नरेन्द्रकुमार रायचंदजी (मद्रास)

धर्म क्या है? : धर्म संस्कृत के "धृ" धातु से बना है जिसका अर्थ है धारण करना। 'धारयिते इति धर्म' सूक्ति के अनुसार धर्म वह है जिसने धारण कर रखा है। जिसने हमें यानी हमारी देह को धारणकर रखा है और उसीने सारे विश्व को धारण किया हुआ है-वह है धर्म। धर्म एक शक्ति है जो कि आनंद स्वरुप है और इसी को जानना धर्म को जानना है। धर्म एक सिद्ध-दर्शन है जिससे निर्मलता- पवित्रता-सुन्दरता और विशुद्धता का सौरभ आत्मा में सुवासित होता है। धर्म शांति का वह अनुपम झरना है जो हमारी आत्मा में तथा अन्तरतम में छिपा बैठा है, इस मधुर स्त्रोत की हमें पूर्ण निष्ठा एवं सच्चाई से खोज करनी है, उसे पाना है बस यही धर्म है। धर्म आत्मा की आन्तरिक पवित्रता है। जीवन की उष्ण उष्मा में शीतल छांव, आत्मोन्नति की सर्वोच्च राह सुख और शांति का पावन प्रदेयक है धर्म। धर्म एक सामाजिक घटना, एक अत्यंत वैयक्तिक क्रान्ति है। व्यक्ति दुसरों के साथ क्या करता है, इससे धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं, उसका सम्बन्ध इस बात से है कि व्यक्ति स्वयं अपने साथ क्या करता है। धर्म समाधान है, धर्म का विचार से, चिन्तन से कोई सम्बन्ध नहीं है, उसका सम्बंध निर्विचारणा से है। धर्म वह तत्व है जो नाम और रुप के तट-बन्ध से निर्बन्ध है उसकी मुक्तधारा किसी भी ओर से जीवन अनुप्राणित कर सकती है। वह दृश्य नहीं अनुभाव्य है, उसका अनुभव किया जा सकता है। महान चिन्तक जोवर्ट ने कहा है कि 'सच्चा धर्म हृदय की कविता है, वहीं सारे गुण पुष्पित होते है।' भगवान महावीर ने कहा है:-

"जरामरण वेगणें, बुज्झमाणाण पाणिणं।
धम्मो दीवो पइट्ठाय गई सुरणमुत्तम।।"

अर्थात संसार के जरा और मरण के वेगवाले प्रवाह में बहते हुए जीवों के लिए धर्म ही एक मात्र द्विप है, प्रतिष्ठा है गति है और शरण है।

धर्म की उपयोगिता क्या है? : महात्मा गांधी ने कहा है कि 'बिना धर्म का जीवन बिना सिद्धान्त का जीवन है और बिना सिद्धान्त का जीवन वैसा है जैसा बिना पतवार का जहाज। बिना पतवार के जहाज समान धर्महीन मनुष्य कभी भी अपने अभिष्ट स्थान तक नहीं पहुँच सकेगा।' धर्म के अभाव में जीवन एक विडंबना बन जाता है। अंग्रेजी में एक कहावत है," A man without religion is a horse without a bridle धर्माचरण से आंतरिक कलुषितताएँ भस्मिभूत होकर अनंतानंत समृद्ध सुखों का उसमें उद्‌भव होता है। धर्म मानव का परमोच्च मार्गदर्शक है, वह जीवन को सार्थकता की ओर अभिमुख करता है। धर्म हमें सिखाता है कि हम जीवन को उपर कैसे उठायें? साध्यतक कैसे पहुँचे? जीवन को साध लेने की यर्थाथ साधना का नाम ही धर्म है।

स्वामी विवेकानंद ने कहा है 'मनुष्य कि साधुता ही सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था का आधार है मनुष्य जितना सृसंस्कृत होगा, समाज उनता ही उन्नत होगा और मनुष्य में सृसंस्कृतता लाने का एक ही मार्ग है-धर्म का मार्ग।' एक विद्वान ने लिखा है कि "जीवन का विकास करना है तो हर पल बाहर की ओर देख, अन्दर की ओर देख , उपर की ओर देख । बाहर की ओर देखना विज्ञान है, अन्दर की ओर देखना दर्शन है और उपर की ओर देखना धर्म है। जीवन आत्मा के उत्थान के लिये है-कर्मबंन्धों को समाप्त कर देने के लिए है। इसका अंतिम लक्ष्य पूर्णता पाना है, इस लक्ष्य की पूर्ति में जो व्यवहार सहायक है वह नैतिक है, जो बाधक है वह अनैतिक है।

नैतिकता विहीन धर्म समाज के लिए धोखा बन जाता है और नैतिकता विहीन समाज मानव जाति के लिए अभिशाप बन जाता है। परन्तु आचरण मात्र ही होने से कोई वस्तुतः नैतिक नहीं होता. उस क्रान्ति के लिए अंतस् का परिशुद्ध होना अवश्यक है। अंतस् बदलता है तो आचरण अपने आप बदलता है, अंतस् को बदले बिना सिर्फ आचरण बदलना धोखा है। मनको निर्मल रखना ही धर्म है बाकी सब कोरे आडम्बर है। इसलिए कहा गया है कि" आचार : प्रथमो धर्मा तृणा श्रेयस्करो महान " अर्थात सात्विक आचार ही धर्म है और मनुष्यों के लिए महान कल्याणकारी है।

है धर्म पहुंचना नहीं, धर्म तो जीवन भर चलने में है।
फैलाकर पथपर स्निग्ध ज्योति, दीपक समान जलने में है।।

दिनकर

धर्म का वर्तमान स्वरुप-कितना कुरुप : धर्म बुद्धि-ग्राह्य नहीं, हदय-ग्राह्य है। धर्म जीवन का तत्व है, यह आत्म-शुद्धि या पवित्रता का एक मात्र साधन है। 'संसारो स मरुस्थले सुरतरुनास्तयेव धर्मात्पर': अर्थात इस संसार रुपी रेगिस्तान में धर्म के सिवाय दूसरा काई कल्पवृक्ष नहीं है। मगर वर्तमान में हमने धर्म को क्रियाकाण्डों के साथ जोड़ दिया है और जहाँ उन्हें ही प्रधानता प्राप्त हो जाती है, वहाँ धर्म का तेज धुंधला हो जाता है। धर्म का उपासना पक्ष गौण और चारित्र पक्ष प्रधान होना चाहिए। जीवन का सत्य धर्म में निहित है और धर्म को हम केवल ओढ़णी की तरह ओढ़ रहे हैं। धर्म के नाम पर कुछ आडम्बर हमारे पास है, उन्हें हम ज्यों का त्यों कर लेते हैं और समझ लेते हैं कि धर्म हो गया। माला जाप-तिलक-छाप-पूजापाठ ये धर्म के सहयोगी तत्व हो सकते हैं मगर उन्हे ही धर्म मानना भयंकर भूल है। उराध्ययन सूत्र में आता है-

न वि मुडिएण समणो, न ओंकारेण बंभणो।
न मुणी रण्णवासेणं, कुसचीरेण न तावसो।।

अर्थात केशलुंचन मात्र से कोई श्रमण नहीं होता, ओंकार के जाप से कोई ब्राह्मण नहीं होता, अरण्यवास से मुनि नहीं होता एवं केवल, घाँस के वस्त्र पहनने से कोई तापस नहीं होता। वास्तव में मुनिता एवं अमुनिता वृत्तियों में रहती है। समता से श्रमण, ब्रैह्मचर्य की उपासना से ब्राह्मण ,ज्ञान की उपासना से मुनि और तप से तपस्वी बना जाता है। छापा या तिलक लगाने से अथवा कोई वेष-विशेष को धारण करने मात्र से व्यक्ति धार्मिक नहीं बन पाता। धार्मिक बनने के लिए सबसे बड़ी शर्त है-नीति और सदाचार में विश्वास रखना केवल विश्वास रखना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि उस विश्वास के अनुसार अपने जीवन को नीतिमय एवं सदाचारी बनाना भी परम आवश्यक है। आत्म-धर्म को लोक-धर्म से विच्छिन्न करके नहीं देखा जा सकता। वास्तविक धर्म संसार निषेधक [world-Rejecting] नहीं आत्म-परिवर्तन [Self- Trasfiguring] होता है। धर्म मन्दिरों-मठों-ग्रथों- पंथों में नहीं व्यक्ति-व्यक्ति के जिवित व्यवहार में होना चाहिये, भगवान की पूजा नहीं करनी होती- भगवान को जीना होता है, उसकी मन्दीर में नहीं जीवन में प्रतिष्ठा करनी होती है। परमात्मा सिर्फ पवित्रता का दूसरा नाम है। वर्तमान-युग में वही धर्म जीवंत रहेगा जो जीवन की पवित्रता से जुड़ा होगा। जो आचार शुद्धि और चारित्रिक अभ्युदय की पृष्ठभूमि पर खड़ा होगा।

कर्म-काण्ड न धर्म है, धर्म न बाह्याचार।
धर्म चित्त की शुद्धता, सेवा-करुणा प्यार।।
भीतर बाहर स्वच्छ हो करे स्वच्छ व्यवहार।
सत्य-प्रेम-करुणा जगे, यही धर्म का सार।।

'नामस्मरण'

कु. कान्ता शर्मा

जब हरि का स्मरण करे मानव,
आल्हादित मन हो जाता है।
वह परम सुख का करे अनुभव;
जो सात्विक भाव जगाता है॥ १॥

गुरु की परम कृपा से मन,
जिज्ञासु सा बन पाता है।
अन्तस् उद्भूत हरेक प्रश्न;
आसानी से सुलझाता है॥ २॥

श्रद्धा से ही आप्लावित बन,
शिष्य शक्ति को पाता है।
वह सत्य तत्त्व का ज्ञानीजन;
तो स्वतः शान्त हो जाता है॥ ३॥

असत् भावना से विरक्त,
योगी मन ही रह पाता है।
जो ऐसे गुरु से हो दीक्षित;
वह अनुगृहीत हो जाता है॥ ४॥

दृश्यमान जगत में ही जन,
विराग भाव को पाता है।
आत्मबोध में प्रवृत्त हो मन;
साधक सा हो जाता है॥ ५॥

स्वाध्याय निरत हो के जो मन,
कर्म में तत्पर होता है।
सच्चिदानन्द ब्रह्म के मनन,
लक्ष्य पर निर्भर होता है॥ ६॥

जब दैहिक विपदा से मानव,
बेबस सा हो जाता है।
तब नामस्मरण का पवित्रभाव,
पर्याप्त शान्ति पहुँचाता है॥ ७॥

अष्टांग मार्ग में विहित विधान,
जब वन्दनीय बन जाता है।
धारणा, ध्यान, समाधि ज्ञान;
तब योग प्राप्ति करवाता है॥ ८॥

चित्तवृत्तियों का ही निरोध,
योग लक्षण कहलाता है।
चेतन शक्ति का स्वरुपबोध;
कैवल्य पद बन जाता है॥ ९॥

जब भी करें सतत आराधन,
मन विभोर हो जाता है।
परहित में लीन हो जो जन;
सत्पथ को वह अपनाता है॥ १०॥

देवात्म शक्ति का दर्शन,
जाने कब हो जाता है।
निखिल सृष्टि का निदर्शन;
नियन्ता से हो पाता है॥ ११॥

हर जन चाहे जिसे इस जग में,
सुंदर जीवन वह पाता है।
स्वयमेव न चाहे जो कुछ जग से;
वही तो सब कुछ पा जाता है॥ १२॥

हारे को हरि नाम का स्मरण,
परम आनन्द पहुँचाता है।
भव के उस पार अवलोकन;
ध्यानस्थ मन कर पाता है॥ १३॥

पँक्तियों का विस्तृत आयाम,
जब निःशेष हो जाता है।
शब्द शक्ति हो विस्तृत नायाब;
सब सविशेष हो जाता है॥ १४॥

पशु वध अर्थव्यवस्था का वध है।

श्री पन्नालाल मुन्धडा
-अध्यक्ष भारतीय जीव जन्तु कल्याण बोर्ड

१. आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों में कमी तभी होगी जब कि खेती करने के व्यय में कमी आयेगी।
२. खेती के व्यय में कमी तभी आयेगी जब कि कृषकों को सस्ती खाद, अच्छे बीज तथा भारतीय मनीषियों द्वारा निर्धारित पद्धति से ही खेती करने पर जोर दिया जाये।
३. रासायनों को तथा उर्वरकों को एवं कीटनाशकों के उपयोग को तत्काल रोका जाये क्योंकि इसके उपयोग से उपज कम हो रही है।
४. विश्व स्वास्थसंगठन की सिफारिशों के अनुसार कीटकनाशकों को रोक दिया जाय क्यों कि उससे महिलाओं के दूध में २१ गुना अधिक विष पाया जा रहा है।
५. भारत में मानव आबादी की तुलना में पशु आबादी सम्पूर्ण विश्व की अपेक्षा कम है जब कि वह अधिक होनी चाहिए।
६. अमेरिका जैसे देश तथा भारतीय पूंजी वर्ग जब गोबर खाद द्वारा उत्पादित अनाजों तथा फलों को विशिष्ट रूप से अधिक दामों पर खरीदने लगे है तो हमें गोबर के महत्व को समझते हुए पशु वध अविलम्ब बन्द करना चाहिए।
७. पशु वध बन्द ही बेरोजगारी को समूल नष्ट कर सकता है।

यह जरूरी है कि कृषक को खेती में लगने वाली आवश्यक वस्तुएं सरलता से मिलती रहें, उसे भूमि को उपजाऊ बना रखने वाली खाद सरलता से तथा विपुल मात्रा में मिलती रहनी चाहिए, जिससे उसकी जमीन भी उर्वरा बनी रहे और फसल भी अच्छीमिलती रहे, यदि ऐसा होता रहता तो उसे शासन द्वारा निर्धारित मूल्य भी लुभावने लगते और आवश्यक वस्तुओं के दाम भी नहीं बढ़ते और तभी सच्चा ग्रामीण विकास होता, साथ ही बेरोजगारी का नामोनिशान भी मिट जाता। जनतन्त्र का पहला उसूल तो यही होना चाहिए कि हर व्यक्ति को पूरे समय का काम मिले।

अत: यदि हम महात्मा गांधी, जयप्रकाश नारायण तथा लोहिया जी द्वारा मान्य आर्थिक सिद्धान्तों पर विश्वास रखते हुए इस बात को स्वीकार कर लेते कि गोधन व पशु भारतीय किसान के लिए एक ऐसा कल्प वृक्ष हैं जो उसके लिए केवल गाय जैसे उपयोगी पशु का ही प्रबन्ध नहीं करता है वह तो उसकी सच्ची कामधेनु है जो उसे पौष्टिकता के लिए दूध, घी, मक्खन तथा छाछ जैसे अमृत पदार्थ देती है, भूमि को सतत उर्वरा बनाये रखने के लिए गोबर की खाद देती है, परिवहन तथा कृषि कार्य हेतु बैल देती है और साथ ही साथ उसे ईंधन के लिए उपले तथा अब तो बायो गॅस तक का प्रबन्ध कर देती है तो फिर भारत में गोधन व पशुओं का कत्ल क्यों किया जा रहा है। यदि कत्ल रोक दिया जाता तो न तो भारत विदेशी कर्जों के जाल में ही फंसता और न ही उसे बेरोजगारी का शिकार

बनना पड़ता।

हम यदि जरा ध्यान से देखे तो सहज ही समझ लेंगे कि रासायनिक उर्वरकों के उत्पादन पर कितना अधिक खर्च किया जाता है। और उससे किसान को मिलता क्या है, उसे तो रासायनिकों के उपयोग ने ही तोड़ा है। सन् १९६६-६७ में रासायनिक उर्वरकों की खपत ७ कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर थी जो १९८६-८७ में बढ़कर ५०.९ कि. ग्रा. प्रति हे. हो गयी किन्तु खाद्यानों का उत्पादन जो १९६६-६७ में ७४.२ मिलियन टन था वह १९८६-८७ में १४४.४ मिलियन टन ही हुआ अर्थात जहां रासायनिकों की खपत सात गुनी बढ़ी वही उत्पादन तो केवल दो गुना ही बढ़ पाया और इतनी बढ़त भी तब हुई जबकि लाखों एकड़ नई जमीनें जोड़ी गयी, पंच-वर्षीय योजनाओं के अंतर्गत सिंचाई की सुविधायें बढ़ायी गयीं, अच्छे बीजों की उपलब्धि भी बढ़ी और विभिन्न प्रकार की योजनाओं के अंतर्गत कृषकों को अच्छा पैसा भी बांटा गया, उन्हें कृषि महाविद्यालयों के विशेषज्ञों द्वारा अच्छा प्रशिक्षण भी दिया गया, तो यदि हम इन सब सुविधाओं के परिपेक्ष्य में रासायनिक उर्वरकों द्वारा दिये लाभ का मूल्यांकन करें तो यह सहज ही सिद्ध हो जाता है कि इन उर्वरकों के उपभोग से उपज बढ़ी नहीं बल्कि घटी है। साथ ही यह भी जाहिर है कि इन्ही परिस्थितियों की वजह से हमें रासायनिक खादों तक का आयात भी करना पड़ा है। इस तरह से हमें तो खाद्यानों, दुग्ध पाउडर, लकड़ी, काग़ज की लुगदी, चीनी, खाने का तेल इत्यादि तक का आयात करना पड़ा है और इसी वजह से हम विदेशी कर्जों के जाल में आकंठ डूबे हुए हैं।

पशुओं के कत्ल तथा रासायनिक उर्वरकों के उपयोग की वजह से ही हमें इस प्रकार के कीटकनाशकों का उपयोग करना पड़ा है। जिनके उपयोग ने अनाज तक को विषैला बना डाला है और केवल इसी एक वजह से अनेकों प्रकार की बीमारियां बढ़ती चली जा रही हैं। इसे भी शायद भारत के भाग्य की विडम्बना ही माना जायेगा कि जिन कीटकनाशकों कों काटाणुओं को मारने के लिए उपयोग किया गया था उन्हीं कीटकनाशकों ने उन कीटाणुओं कें इस प्रकार निरोधक शक्ति पैदा कर दी कि अब उन कीटकनाशकों का प्रभाव तक नहीं हो पाता है, तथा वे ही कीटकनाशक वर्षा ऋतु में बह-बह कर, नालों, नहरों, नदियों और तालाबों के माध्यम से धरती के अन्दर बहने वाली जलधाराओं तक पहुंच गये है। जहां तक पानी के स्वच्छ किये जाने कि बात है तो स्वच्छ पानी केवल २० प्रतिशत लोगों को ही मिल पाता है और जो पानी स्वच्छ करने के बाद में मिलता है उसमें भी जांच करने पर पाया गया है कि २०० प्रकार के हानिकारक तत्व हैं। जिनमें से २७५ तो आरगैनिक है तथा २३ तत्व तो इसमें ऐसे विषैले पाये गये हैं, जिन्हें वैज्ञानिक भाषा में कासीनोजेन्स कहते है। विज्ञान को सतत खोज करनी पड़ेगी कि किस-किस प्रकार के रोगाणु हमारे पीने के पानी में मिलते जा रहे हैं।

विश्व स्वास्थ संगठन की रिपोर्ट में भी यह पाया गया है कि जिन ७५ माताओं के

दुग्ध का परीक्षण किया गया था उनमें सभी में निर्धारित सीमा से कहीं २१ गुना अधिक विषैला पदार्थ पाया गया है।

१९८७ में अपनी ही संसद के समक्ष जब स्वास्थ तथा परिवार कल्याण मंत्री ने संसद के पटल पर अपनी रिपार्ट प्रस्तुत की तब उसमें डेरी उत्पादन के ७ नमूनों में से ६ विषपूर्ण बताये गये थे।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार कृषकों को कीटकनाशकों के सही उपयोग के शिक्षण के अभाव से कृषकों में भी लगभग दस लाख कृषक प्रतिवर्ष विष से प्रभावित होते हैं तथा २० हजार को मर ही जाते है। तमाम ग्रामीण महिलायें तो कीटकनाशकों के डिब्बों में भोजन सामग्री तथा पानी रखती हैं तथा इसी पानी से अपने बच्चों के बालों को भी धोती हुई पाई जाती है। उनका अनुमान होता है कि शायद इस पानी से जुयें मर जायेगी किन्तु परिणाम में उन्हें अनेको प्रकार के भयानक रोग प्राप्त होते हैं। यह एक दूसरे प्रकार का दुर्भाग्य है कि डाक्टर्स भी कीटकनाकों के द्वारा होने वाली बीमारियों, के कारणों को खोज नहीं पाते हैं। वे चर्म रोगों, आँखों की खराबी तथा बालों के झड़ने को कीटनाशकों के दुरुपयोग से जोड़ ही नही पाते है और जब कुछ समझ पाते हैं तब तक वे रोग खतरनाक स्तर तक पहुंच जाते हैं।

हमारे भारतीय कृषि विशेषज्ञ तथा मनीषी जो भारतीय कृषि के धुरंधर पंडित थे वे शताब्दियों पहले इस प्रकार की कठिनाइयों से भलीभांति परिचित थे, क्योंकि भारत तो हजारों वर्षों से एक अच्छा कृषि प्रधान देश माना जाता रहा है इसीलिए वे लोग केवल गोबर के खाद का ही उपयोग करते थे, जिसकी गन्ध मात्र से अनेकों प्रकार के कीटाणुओं का नाश हो जाता है। इटली में तो डाक्टर्स यहां तक सलाह देते है कि टी. बी. सेनीटोरियम से के अन्दर गोबर रखा जावे क्यों कि टी. बी. के कीटाणू तो गंध मात्र से मर जाते है। वही हाल गो मूत्र का है। जिसमें अनेकों प्रकार के कीटाणुओं को मारने की शक्ति है तथा गो मूत्र का उपयोग तो अनेकों असाध्य रोगों में हितकर सिद्ध हुआ है। इसी तरह से नीम हमारा दूसरा कीटकनाशक है जो किटाणुओं को भी नष्ट करता है तथा जमीन को बंजर बनने से भी रोकता है।

हमारे विकास की योजनाएं ही हमारी ग्रामीण व्यवस्थाओं के विपरीत बनायी गई है जिसकी वजह से हमें हमारे सच्चे राष्ट्र धन का निर्यात करने पर विवश होना पड़ा है जैसे कि ८७-८८ में हमने ५६,५०८ टन पशु मांस का निर्यात किया, जिसमें ५१,५४० टन भैंस, बैल बछड़े गाय का मांस तथा ७,९६८ टन भेड़ बकरों का मांस था, जिससे हमें केवल ९३.९५ करोड़ की विदेशी मुद्रा की प्राप्ति हुई। किन्तु इस कमाई की वजह से हमें हमारे १५ लाख बहुसंख्य पशुओं का कत्ल करना पड़ा। १९८८-८९ में हमने ११० करोड रुपये के मूल्य के मांस का निर्यात किया और १८ लाख बहुल्य पशु खोये। और अब जैसा प्रस्तावित किया गया है कि हमें ५०० करोड़ रुपयों के मूल्य के मांस का निर्यात करना है तो इसके

लिए हमें पुनः ५० लाख बहुमूल्य पशु कत्ल करने पड़ेंगे। चमड़े के वस्त्रों तथा वस्तुओं के निर्यात के लिए भारी उत्साह बताया जा रहा है और इसके लिए भी हमारे देश में लाखों करोडों पशुओं की हत्या की जावेगी।

इस प्रकार के सतत् पशु कत्ल की वजह से हमारे जंगलों का भी विनाश हो रहा है, गत वर्ष ही पश्चिम बंगाल में ३,२४ हे., कर्नाटक में ३,०८,००० हे., महाराष्ट्र में २,१५,००० हे., यू. पी. में २,११,००० हे., आन्ध्र में २,०२,००० हे., केरल में १,८९,००० हे.,गुजरात में २,८०,००० हे. तथा मध्य प्रदेश में २,८०,००० हे. भूमि में फैलें विस्तीर्ण जंगलों का विनाश हुआ है। क्योंकि हम लकड़ी के ईंधन के स्थान पर गोबर गॅस का उपयोग नहीं कर सके। यदि हम जंगलों को सुरक्षित बचा सकते तो हमारे जल-विद्युत के श्रोत सूख नहीं पाते और हमें हमारी आवश्यकता के अनुसार बिजली मिलती रहती, जिसका उपयोग हमारे उद्योंगों तथा कृषि के क्षेत्र में हमारी सहायता करता रहता—साथ ही वर्षा भी यथावंत होती और देश की धरती यथावंत सोना और हिरे उगलती रहती क्योंकि हमारी अधिकांश खेती तो केवल वर्षा के सहारे पर है। सारा देश अनावृष्टि तथा अतिवृष्टि के प्रकोप से बचा रहता क्योंकि मिट्टी का कटाव भी रुकता और नदियों में पानी भरपूर बनाये रखने मी क्षमता भी बनी रहती—यह सब तभी हो सकता था जब कि पशु वध पर रोक लगी होती और जिससे हम गोबर के खाद का उपयोग करते जिससे हमारी जमीनों की उर्वरा शक्ति यथावत बनी रहती और वह रासायनिक उर्वरकों के दुष्प्रभाव से बची रहती।

अब जरा आप हमारे-योजनाकारों के दृष्टिकोणों का अवलोकन करें कयोंकि वे तो आज भी विदेशी मुद्रा अर्जन हेतु पशु वध की ही सलाह देते चले जा रहें है, और वे मानते हैं कि हम परम भाग्यशाली हैं जो हमारे यहां पशुओं की संख्या भी अत्यधिक है। अतः प्रति एक हजार मनुष्यों के पीछे कितने पशु हमारे यहां बच सके हैं, जरा उसका अवलोकन कर लीजिए।

पशु जाति	१९५१	१९६१	१९७१	१९८१	१९९१	२००१	२०११
गाय, बैल (कैटल)	४३०	४००	३२६	२७८	२२०	११०	२०
भैसे-भैसे	१२०	११७	१०६	१००	९०	६०	२०
बकरे	१४१	१३९	१२९	११८	१०६	उ. न.	उ. न.
भेड़ें	१०८	९२	७४	६२	५०	,,	,,

अब आपको उत्सुकता होगी कि कुछ बाहरी देशों में प्रति हजार व्यक्तियों के पीछे कितने पशु हैं। इसे भी देखें ताकि हमें ज्ञान हो कि हम पशुधन के क्षेत्र में कितने सम्पन्न हैं। ये आंकड़े १९८१ के आधार पर दिये गये हैं।

	भारत		अर्जेंटिना	आस्ट्रिया	कोलम्बिया	ब्राजील
गाय-बैल	२६८		२०८९	१३६५	९१७	७२८
			नेपाल	पाकिस्तान	थाइलैंड	वियतनाम
भैंस	१००		२८४	१३०	१२५	४०३
		सुडान	पाकिस्तान	इथोपिया	टर्की	सोमालिया
बकरे	११८	६७७	३८७	५२३	३९८	३२६४
		न्यूजीलैंड	अर्जेनटिना	उरुगवे	आस्ट्रेलिया	द. आफ्रिका
भेड़	६२	२३५२८	१०८३	८७७९	७६६१	१०२२

मैं व्यक्तिगत रूप से भारत के बारे में बताई गई पशु संख्या पर विश्वास नहीं करता हूँ क्योंकि आज तो सन् १९९१ में मुझे मेरे देश में कहीं भी दस व्यक्तियों के पीछे दो गाय तथा एक भैस दिखाई नहीं देती और यह ३:१० का अनुपात गले उतरने जैसा नहीं लगता है। एक और दूसरा स्पष्ट कारण है कि हमारे यहां दूध की इतनी कमी है कि प्रति व्यक्ति के पीछे केवल कुछ ग्राम ही उपलब्ध है जब कि कम से कम एक व्यक्ति के लिए एक लीटर दूध तो होना ही चाहिए और यदि उपरोक्त आंकड़ों का कोइ सही आधार होता तों फिर हमें हमारे देश में दूध की आवश्यकता की पूर्ती के लिए दुग्ध पावडर का आयात नहीं करना पड़ता, नहीं हमें दूध के नाम पर सोयाबीन का दुध पीना पड़ता।

अब मैं आपके समक्ष गोबर के अर्थशास्त्र का विवेचन प्रस्तुत करना चाहूंगा और वह भी इसलिए क्योंकि, लोगों को अभी भी ऐसा भ्रम है कि जब गाय भैंस दूध देना बंद कर देती हैं तब उसे क्यों खिलाया पिलाया जावे। गोबर के उपयोग पर आर्थिक प्रयोग करने वाले यह सिद्ध कर चुके हैं कि यदि हमारे गाय बैल केवल गोबर ही देते रहें और दूध नाममात्र को भी नहीं देवें तो भी उनका पालन जाना अनार्थिक नहीं है।

एक गाय अथवा भैंस से हमें ३५०० केजी गोबर तथा २००० लिटर मूत प्रति वर्ष प्राप्त होता है। जिसके माध्यम से ४५०० घन फीट बायोगैंस, ८० टन सेंद्रिय खाद तथा २००० लीटर सेंद्रिय कीटकनाशक मिलता हैं एवं सेन्द्रिय खाद के उपयोग से प्रति एकड़ ३० से ४० प्रतिशत तक उत्पादन बढ़ जाता है। इन उत्पादित वस्तुओं का मूल्य भी अधिक मिलता है, क्योंकि सेंद्रिय खाद द्वारा उत्पादित खाद्यान्न अधिक शक्ति प्रदायक तथा स्वादिष्ट सिद्ध होता है। इन लाभों व अन्य लाभों को यदि जोड़ा जाय तो प्रति वर्ष प्रति पशु जो दूध नहीं देता उससे भी २० हजार रुपये का लाभ होता है।

सबसे बड़े मजे की बात तो यह है कि जिन्हें हम महान विकसित देश कहते है वह भी अब गोबर गैस की शक्ति पर भरोसा करने लगे है क्योंकि जिस ऊर्जा का उपयोग वे पेट्रोल, डिजल, कोयला तथा अणु शक्ति के माध्यम से करते हैं वे सब पर्यावरण को दूति करने वाले सिद्ध होते जा

रहे हैं तथा उनके भण्डार भी सीमित हैं।

केलिफोर्निया में तो अब गाय के गोबर पर आधारित पावर जेनेरेटिंग इकाइयां तक स्थापित कर ली है। जिस के लिये वे ८००००/९०००० सूखी तथा अपंग गायों को पाल रहे है और ७०० से ९०० टन गोबर प्रतिदिन प्राप्त कर इससे १५ मेगावाट पावर उत्पादन करते हैं, जो २० हजार परिवारों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर देता है इस योजना पर उन्होंने केवल ४५ मि. डालर खर्च किये थे जिससे उन्हें केवल २ मिलियन डालर की लागत पर दस मिलियन डालर की रिटर्न मिलने लगी है। और विदेशी मुद्रा की बचत का हाल देखे तो वे तीन लाख बैरल पेट्रोलियम के आयात से बचे गये। तथा उन्हें जो १६० टन गोबर की राख प्रतिदिन मिलने लगी जिसका उपयोग वे उर्वरम के रूप में करते है और अब वे पर्यावरण के हर प्रकार के दोष से मुक्त हैं।

हमारी कूप मंडुकता हमारे देश के बहुमूल्य पशुओं के मांस व चमड़े के निर्यात व्यापार से ही जाहिर हो जाती है क्योकि हमने तो हमारे देसी तरीके से सोचना ही छोड़ दिया है। जो पशु कुदरती तरीके से मरेंगे तो हमें ज्यादा बड़ा आकार का चमड़ा मिलेगा जिससे निर्यात करके महले से भी अधिक विदेशी मुद्रा कमा सकते है।

यदि हम गोबर खाद तथा गोबर, गोमूत्र और नीम, लहसुन तथा तुलसी के पत्तों से बनाए गए कीटकनाशकों का प्रचार प्रसार हमारे अखबार, रेडियो तथा दूरदर्शन के माध्यम से कर सकें और कृषकों को इनके सही उपयोग का ज्ञान तता प्रशिक्षण देना शुरू कर दें तो हम हमारे ५,५६,००० गांवों में कम से कम एक लाख देशी उर्वरकों के कारखाने स्थापित कर सकते है और इस प्रकार से हम पांच लाख लोगों को रोजगार भी दे सकते हैं यदि गोबर से शक्ति प्राप्त करने वाली पावर इकाईयों का संस्थापन हमारी सरकार स्वयं प्रारम्भ कर दे तो सारे देश की बेरोजगारी पलक झाकते समाप्त हो सकती है।

यहां भी यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि अब तो अमेरिका जैसे देशों में भी गोबर की खाद के द्वारा उत्पादित फसलें अधिक कीमत पर बेची जाती हैं। हमारे अपने देश में भी जो लोग सम्पन्न हैं वे प्रयत्न करके ऐसा ही अनाज खरीदते हैं जिसे गोबर की खाद के माध्यम से उत्पादित किया गया हो। यदि स्वयं कृषक है तो वे अपने स्वयं के उपयोग के लिये आने वाली फसलों पर केवल गोबर की ही खाद डालते हैं इसीलए रासायनिक उर्वरकों तथा कीटकनाशकों के माध्यम से पैदा की गई वस्तुए केवल उन्हीं असहाय तथा गरीब लोगों के लिए बची हैं जिन्हें राजनैतिक भाषा में जनता कहते हैं।

मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास हैं कि यदि उपरोक्त वस्तुस्थिति पर आप स्वयं ध्यान देंगे तो हमारे देश की आर्थिक कठिनाइयों से उबरने का अवसर मिलेगा तथा पशु वध पर प्रतिबन्ध लगते ही हमारे देश को करोड़ो रुपयों का वार्षिक आर्थिक लाभ होना प्रारम्भ हो जाएगा।

मम्मी नहीं, मां बनिये

-कुसुम गुप्ता

यह संस्कृति का संक्रमण काल है। पाश्चात्य जीवन का प्रभाव हमारे परिवेश पर निरन्तर बढ़ता जा रहा है। हम वह सभी कुछ विस्मृत कर देना चाहते है जिसमें पुरातन की बू है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है मनुष्य परिवर्तन प्रिय है नूतन वेशभूषा, नूतन चिन्तन, नूतन व्यवहार नूतन खानपान उसे अपनी ओर आकर्षित करते हैं और दूसरा कारण यह है कि हम स्वयं को अधिक से अधिक आधुनिक दर्शना चाहते हैं। इसलिए स्त्रियां बच्चों के द्वारा अपने को माँ नहीं 'मम्मी' कहलवाने में ज्यादा प्रसन्न होती है। यदि शब्द के उच्चारण और अर्थ पर जाये तो उसकी भयावहता की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि ममी (mummy) तो वह शव है जो मिस्त्र के पिरामिड में जाने कब से मसाला लगाकर सुरक्षित बन्द कर दिया गया है। जिसका शारीरिक अस्तित्व तो है किन्तु उसमें प्राण, वायु आत्मा आदि कुछ भी नहीं है।

इसी प्रकार विशेषकर बड़े घरानों में पिता को 'डैड' शब्द से सम्बोधित करने का रिवाज़ बन गया है DAD और Dead दोनों शब्दों का उच्चारण एक सा ही है। क्या हमारे बच्चे पिता को मृत कहकर सम्बोधित नहीं कर रहे हैं? मां, अम्मा और माता शब्दों में जो माधुर्य है, जो गरिमा है वह निश्चय ही 'मम्मी' शब्द में नहीं। किन्तु हमारा उद्देश्य, केवल शब्द भिन्नता तक ही सीमित नहीं है बल्कि हमें तो यह देखना है कि क्या यह परिवर्तन शब्दों के बदलाव तक ही सीमित है अथवा माँ के व्यवहार में भी कुछ परिवर्तन लाया है।

मम्मी शब्द से हमारे सम्मुख एक ऐसी नारी का चित्र उभरता है जो शिक्षित है आधुनिक है, जो एक सीमा तक धन सम्पन्न भी है। वह जन्म से ही अपने शिशु पर कड़ी निगरानी रखती है, उसे बाहर जाकर अन्य शिशुओं के साथ खेलने नहीं देती, उसे डर रहता है उसके बच्चे को चोंट लग सकती है दूसरे बच्चे उसे गन्दी बाते सिखा सकते हैं और नहीं तो उसके वस्त्र ही मैले कर सकते हैं। वह बच्चे को घर में बन्दी बनाकर रखना चाहती है उसके मनोरंजन के लिये घर में खेले जाने वाले खेलो का प्रबन्ध करती है। इस बात का विशेष ध्यान रखती है कि उसका बच्चा अपने से निम्न स्तर वाले बच्चों से न तो मिले, न ही उनसे बातें करे। वह बाल्यकाल से ही उनमें अलगाववाद की प्रवृत्ति को उत्पन्न करके उसको आत्मकेन्द्रित बना देती है। उसकी केवल एक ही इच्छा रहती है कि बच्चा खूब खाये और खूब पढ़े। बस। और यहां तक कि उसकी चेष्टा यह रहती है कि उसके सास श्वसुर भी उसके बच्चे के विषय में कम से कम हस्तक्षेप करें। उसका प्यार भी उसे टाफ़ी, चाकलेट अथवा अन्य उपहार देने तक ही सीमित रहे।

संस्कार आदि में मम्मी का कोई विश्वास नहीं है। बच्चा सुबह उठकर घर के सब बड़ों के पैर छुए, यह उसे दकियानूसी लगता है। उसके मतानुसार इससे बच्चे में हीनता की भावना आती है। नमस्कार करना भी कोई आवश्यक नहीं है। वह स्वयं भी उसे जगाते समय गुडमार्निंग कहती है।

बात यहाँ तक सीमित हो तो भी उसे विशिष्ट शैली कहकर अनदेखा किया जा

सकता है। किन्तु कई बार तो ऐसी घटनायें सम्मुख आती हैं कि मन विचलित हो उठता है। एक वैश्य परिवार में जाना हुआ पति पत्नी पूर्णतया शाकाहारी थे किन्तु कूड़ेदान में अंडे के छिलके पड़े हुए थे। पुछने पर ज्ञात हुआ कि बच्चों को नाश्ते में दूध के साथ उबले अंडे देने पड़ते हैं। ऐसा क्यों? प्रश्न का उत्तर मिला, "बहन जी , पहले तो हम भी टालते रहे किन्तु जब बच्चे जिद करने लगे कि अंडे खाने को मिस ने कहा है, इससे शरीर बलवान बनता है तो विवश होकर करना पड़ा। वैसे भी अब तो यह आम बात हो गई है"।

मैंने प्रतिवाद करते हुए कहा, "आम बात तो मदिरापान भी हो गया है, क्या बड़े होने पर आप बच्चों की यह बात भी स्वीकार कर लेंगे"

"तब की तब देखा जायेगा "कहकर उन्होंने पीछा तो छुड़ा लिया किन्तु इस प्रकार का चिन्तन रखने वालो के बच्चो की क्या दशा होती है, यह बताना आवश्यक नहीं।

"माँ" शब्द का उच्चारण करते ही गोर्की के उपन्यास 'माँ' की मरियल सी , वृद्धा किन्तु जीवन्त शक्ति का चित्र सजीव होने लगता है। उपन्यास में किशोर अवस्था की वय: सन्धि पर पग धरते हुए युवक और युवतियाँ, चारो की भांति कमरे में अलग अलग और छिप छिप कर घुसते हुए, देर रात तक बहस करते हुए और योजना बनाते हुए फिर भी माँ कभी कभी चुपचाप कमरे में घुसती, अंगठी की अग्नि में लकड़ी के टुकड़े डाल जाती, ठंड का अनुमान लगाती और बच्चों को ठंड़ से बचाने के लिए गरम गरम चाय का प्याला रख जाती।

जब पुलिस इन्सपैक्टर बुढ़िया के घर में घुसकर प्रश्न करता है कि "क्या तुम्हें मालूम नहीं कि यहां मिलकर बैठने वाले क्रान्तिकारी थे और वह गलत कार्य कर रहे थे"तो वृध्दा बड़े संयत स्वर में उत्तर देती है, "इन्सपैक्टर मैं क्रान्ति की परिभाषा से तो परिचित नहीं हूँ किन्तु एक बात अवश्य कह सकती हूँ। **माँ के सामीप्य में बच्चा न गलत सोच सकता है न गलत कर सकता है। बच्चे के हावभाव से माँ को तुरन्त पता चल जाता है कि वह कहाँ गलत है**" कितनी मम्मियों को इतना विश्वास है अपने ऊपर? महारानी कुन्ती को आकर किसी ने सूचना दी की भीम शिलाखंड पर गिर गया है। महारानी कुन्ती ने बड़े सहज स्वभाव से उत्तर दिया "शिलाखंड अवश्य ही टूट गया होगा"।

नरेन्द्र ने अपनी माँ से ही बाल्यपन में ध्यान और भजन का पहला अध्याय सीखा। स्वामी विवेकान्द बनने पर उन्होंने कहा"ईश्वर के पश्चात दूसरा स्थान माँ का ही तो है।" इस प्रकार की माँये अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति सजग होते हुए भी उन बच्चों पर डालने वाले संस्कारों के प्रति अधिक सावधान रहती है। **प्रात: अधिक से अधिक पाँच बजे उठना, चारपाई पर बैठे बैठे ही ईश-प्रार्थना, फिर उठकर सबको प्रणाम, दैनिक नित्य कर्म, इसके पश्चात् खुली वायु में दौड़ और व्यायाम, तत्पश्चात दूध आदि का नाश्ता, फिर पढ़ाई। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिक रहता है स्वस्थ शरीर के लिये अंडे मांस नहीं, व्यायाम तेल दर्शन और खुली वायु की आवश्यकता होती है।** माँओं में अपने बच्चे को बाहर जाकर खेलने में कोई आपत्ति नहीं किन्तु वे इस बात के प्रति अवश्य सजग रहती है कि बच्चा किसी प्रकार की गन्दी आदत न सीखे। ऐसी माँओं के बच्चे ही आगे चलकर कुछ कर दिखा पाते है। अब आप स्वयं ही निश्चित कर लीजिये कि आप एक संस्कारित माँ बनना पसन्द करेंगी अथवा पाश्चात्य प्रभावित मम्मी।

शब्द सागर इनामी स्पर्धा (२)

— श्री प्रदीप एम. जैन.

प्रस्तुत पृष्ठ काटकर उसमें आवश्यक शब्दावली भरकर अपने पूरे नाम व पते के साथ कार्यालय में भिजवायें। प्रथम विजेता को एक सौ रुपये ,द्वितीय को साठ रुपये एवं तृतीय को तीस रुपये अ. भा. श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद शाखा-जोगेश्वरी (बम्बई) के सौजन्य से दिये जोयेंगे। उत्तर इसी पृष्ठ में भरकर कार्यालय में १ जुलाई तक पहुंचना जरुरी है। विजेता के नाम व स्पर्धा के उत्तर अगस्त अंक में प्रकाशित किये जायेंगे। संपादक

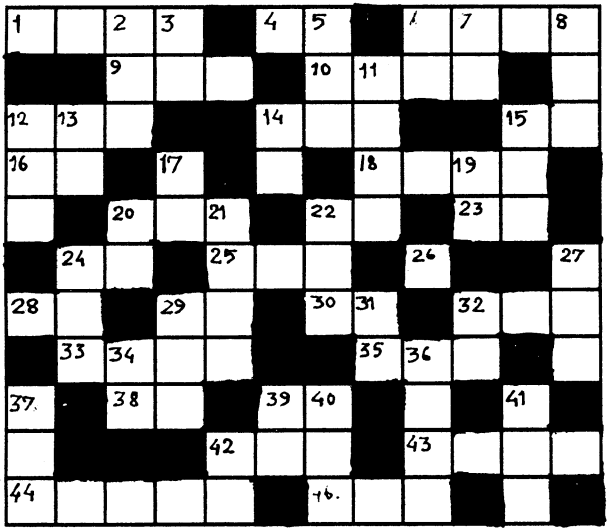

सिधे

१) भगवान महावीर ने प्रण किया था कि वे भिक्षा उसी राजकुमारी से लेंगे जो दासी की अवस्था में होगी, पैरों में बेड़ीयाँ होगी, सर मुंडा हुआ होगा, तीन दिन की भुखी होगी हाथों में बाकुले होंगे व-----में -----होंगे (२,२)

(४) काल चक्र के दोनों विभागों में ६-६ भाग होते हैं प्रत्येक भाग को----कहते हैं(२)

(६) आत्मा के पतन का कारण. (४) [कृपया (ष) की जगह 'स' लिखे]

(९) कई महान आचार्यों ने धर्म की-----बढ़ायी है (३)

(१०) गिरनार, तीर्थ जहाँ से होकर जाया जाता है (४)

(१२) मन को काबू में रखना,-----में रहना (३)

(१४) पक्षाल करने का उपकरण (३)

(१५) कच्चे-----में असंख्य जीव होते हैं (२)

(१६) पुण्य पाप के फल से ही जीव को अच्छी बुरी-----मिलती है (२)

(१८) एक- एक इन्द्रिय जीव (४)

(२०) -----लाख योनि में फिरकर भी जीव नहीं थका? (३)

(२२) रिश्ते वालों की क्या कहें, यह-----भी साथ नहीं आता (२)
(२३) -----ज्ञान, पांच प्रकार के ज्ञानो में से एक ज्ञान (२)
(२४) जो बात सीधे समझ में नहीं आती वह-----के माध्यम से आ जाती है (२)
(२५) -----में आराध्य देव की मूर्ति होती है। (३)
(२६) पंच परमेष्ठी एक शब्द में (१)
(२८)प्रभव स्वामी पहले बहुत बड़े-----थे जो बाद में दीक्षा लेकर जंबू स्वामीजी के पट्ट धर बने (२)
(२९) चार महाविगय में से एक (२)
(३०) कभी-कभी-----से देखी बात भी सच्ची नहीं होती(२)
(३२) इस अवसर्विणीकाल में प्रथम चक्रवर्ती ((३)
(३३) नवकार मंत्र का और एक नाम(५)
(३५) हे गौतम !एक-----का भी प्रमाद मत कर!(३)
(३८) जबान से निकले शब्द व कमान से छूटा-----वापस नही आता है। (२)
(३९) वीर प्रभू के निर्वाण से केवलज्ञान का प्रकाश जब लुप्त हो गया तो लोगो ने घर-घर -----जलाये, इसीलिये दिपावली का पर्व मनाया जाता है।(२)
(४२) प्रभु प्रतिमा का दूध व जल से------किया जाता है ? (३)
(४३) अरिहंत,जिनेश्वर,तीर्थकर (४)
(४४) राजस्थान में भगवान आदिनाथ का विश्व प्रसिद्ध धरणाशाह व्दारा निर्मित तीर्थ।(४)
(४६) -------किसी का नही है, सब कर्म का खेल है। (३)

उपर से निचे की ओर

(२) तीर्थंकरो व्दारा कथित सत्य जिन पुस्तकों में उपलब्ध है।(३)
(३) ------पद,आचार्य पद, गच्छधिपति।(२)
(५) नेमीनाथ जी-------के साथ शादी करने गये थे।(३)
(६) अठ्ठारह पाप स्थानकों में से एक (२)
(७) सोरठ देश मां सचर्यो न चढ्यो-----गिरनार (२)
(८) -------तीर्थ बंद कर जोड़ जिनवर नामे मंगल कोड़ (३)
(९) कम खाओ,-----खाओ (२)
(११) प्रत्येक वस्तू------है,फिर उसका मोह क्यों।(५)
(१२) शालीभद्र के पूर्व भव का नाम (३)
(१३) ------वर्ग में फैले शिथिलाचार को मिटाने के लिये गुरूदेव राजेन्द्रसूरिजी ने क्रियोद्धार किया (२)
(१४) वे परमाणु जो आत्मा पर बादल की तरह छा जाते हैं (२)
(१५) जैनम्------शासनम् !(३)
(१७) बुढापा, वृद्धावस्था (२)

(१९) स्थूलिभद्रजी को ------विजेता भी कहा जाता है!(२)
(२०) ------आरा. जिसमे दुःख-सुख है!(२)
(२१) महाविदेह क्षैत्र में विचरते तीर्थंकर (५)
(२२) स्वयं------वाले, दूसरों को तारणे वाले हमारे जिनेश्वर देव हैं। (३)
(२४) ------करावण अनेअनुमोदन सरिखा फल पावे। (३)
(२६) जैन धर्म, हिन्दु धर्म, बौद्ध धर्म तीनों में मान्य एक धर्म चिन्ह (१)
(२७) आत्मा अपने उत्थान व------की स्वयं जिम्मेदार है।(३)
(२९) कुत्ते की तरह वफादार और बिल्ली की तरह ------मनुष्य भी ऐसे होते हैं। (३)
(३१) -----व स्थावर दो प्रकार के जीव होते है।(२)
(३२) दुश्मन ही नहीं तो------किससे (२)
(३४) ऐसा कलयुग आयेगा हंस चुगेगा दाना धान का, कौआ------खायेगा। (२)
(३६) वर्धमान ने देव को आमल क्रिड़ा में हराया, तो देव ने उन्हें-----नाम दिया। (४)
(३७) नौ तत्त्व में से एक (३)
(३९) प्रवज्या, पाँच महाव्रत को धारना है (२)
(४०) ------झपकते कुछ भी हो सकता है (३)
(४१) ------तो रत्नराज में युवावस्था में ही उत्पन्न हो गया था (३)
(४२) निज------शासन फिर अनुशासन (२)

शोक श्रद्धांजली

उज्जैन :—प्रसिद्ध अभिभाषक एवं जैन समाज के कर्मठ कार्यकर्ता श्री चांदमलजी मेहता का स्वर्गवास दि. २५-४-९१ को हो गया। उनका प्रसन्न चेहरा और साहस प्रशंसनीय था। शान्ति प्रियता और सेवाभाव का अनुपम संगम उनके जीवन में रहा था। उन्होंने जीवन में उतार चढ़ाव दोनों देखे थे। उनकी प्रतिष्ठा व व्यक्तित्व का कारण था समर्पण भाव। श्री मेहता अ. भा. श्री रा. जै. न. प. से भी कई वर्षों तक जुड़े रहे थे। धर्मनिष्ठा एवं मैत्रीभाव का अनुपम आदर्श उनमें था।

आगरा :—स्वतन्त्रता सेनानी वयोवृद्ध पत्रकार एवं श्वेतांबर जैन पत्र के संस्थापक, भूतपूर्व सम्पादक श्री जवाहरलालजी लोढ़ा का दि. २४ अप्रेल १९९१ को ९५ वर्ष की आयु में उनके निवास स्थान मोतीकटरा-आगरा में स्वर्गवास हो गया।

शाश्वत धर्म एवं परिषद की ओर से भाव भरी श्रद्धांजली!

छपते-छपते :—

समदड़ी - आचार्य श्री सुशीलसूरीश्वरजी की निश्रा में नवनिर्मित कुंथुनाथ जिनालय की प्रतिष्ठा द्वि. वैसाख सुदि १३ रविवार दि. २६ मई को सम्पन्न हुयी।

स्वास्थ्य चर्चा

कितनी सुरक्षित हैं ऐलोपैथिक दवाएं

मुक्ता

बस का सफर, दफ्तर में गंजी फाइल, दूल और धुएं के बीच का तेज शोर और झल्लाए हुए बॉस की डाँट, इन सबसे राहत दिलाता है चाय या कॉफी का एक प्याला या एस्प्रिन की एक गोली। यदि बात चुनाव की होगी तो सबसे पहले चाय के प्याले की तरफ हाथ बढ़ेंगे। एलोपैथिक दवाओं के बुरे प्रभाव से सभी जानकारी रखते है। एस्प्रिन से रक्त में प्राथांबिन की कमी हो जाती है और साथ ही रक्त में शर्करा की कमी हो जाती है। इसके प्रयोग से ग्दर में अम्लीय विकार उत्पन्न हो जाते हैं और श्वसन क्रिया में वृद्धि हो जाती है। नतीजतन एक बीमारी दबती है तो दूसरी उभर आती है। वातावरण में प्रदूषण के साथ-साथ बीमारियाँ भी तेजी से बढ़ती जा रही है। औषधियों का निर्माण और सेवन भी बढ़ता जा रहा है। सुप्रसिद्ध चिकित्सा वैज्ञानिक जोशिया ओल्फाफिल्ड ने अपनी किताब में एलोपैथिक चिकित्सा पद्धति की उपयोगिता पर प्रश्न चिन्ह लगाते हुए लिखा है कि 'आधुनिक चिकित्सा' पद्धति से रोगों के लक्षण बदलने, पुराने होते, तथा असाध्य बनते जाते है। इसमें मात्र नई शोधों, नई दवाओं और सिद्धान्तों के गढ़ने में माथा पच्ची का द्वार खुलता है, बीमारी के खत्म होने के नाम पर रक्त में नकली बीमारी पैदा कर दी जाती है, जिसे देखकर असली बीमारी के चले जाने का धोखा भर हो जाए। न्यूजीलैंड के रेडियो विज्ञान से चिकित्सा करने वाले डॉ. उलरिक विलियम, लंदन मे प्रसिद्ध चिकित्सा शास्त्री ईवास, प्रसिद्ध फ्रांसीसी शरीर शास्त्र वेत्ता डॉ. भेजी और रसायन शास्त्र की शोध पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले लुई पोलिग आदि ने तो खास तौर से घोषणा की है कि चिकित्सा शास्त्र में सब कुछ अनुमान, कल्पना और प्रयोग की अनिश्चित स्थिति में चल रहा है। क्षय रोग या तपेदिक के लिए आजकल बच्चों को टीके के बारे में इंग्लैंड के स्वास्थ मंत्रालय के मेडिकल मैमोरेडम नं ३२८ में साफ किया गया है कि बी. सी. जी. के टीकों के हानि रहित न होने की कोई गारंटी नहीं है। बी. सी. जी. से संबंधित शोध विशेषज्ञ डॉ. नोवेल इरविन ने अपनी किताब बी. सी. वैक्सिनेशल थ्योरी एंड प्रैक्टिस में इस टीके से होने वाली बीमारियों के विषय में लिखा है कि इसके प्रयोग से गाठें भरने, घाव हो जाना, भीतरी फोड़े निकलना जैसी बीमारियाँ हो सकती हैं। इसी तरह चेचक या पोलियों के टीके लगाने के बाद भी यह निश्चित नहीं है कि ये बीमारिया नहीं होंगी।

जर्मनी में कुछ साल पहले नींद की गोली थैलिडोमाइल का सेवन करने वाली महिलाओं को विकलांग संतान पैदा होने लगी। ज्यादातर बच्चे फोकीमेलिया रोग के शिकार पाए गए उनमें हाथ-पैर बुरी तरह मुड़े-जुड़े पाए गए। नींद की इस दवा के कारण अनेक देशों में तहलका मच गया। नतीजतन दवा पर पाबंदी लगा दी गई। फिलाडेलाफिया के डाक्टर राबर्ट बाईज ने सल्फा ड्रग और एंटी-बायोटिक्स दवाओं के बारे में कहा है कि इनके

प्रयोग से स्टेफिलोकोक्स जाति के खतरननाक जीवाणु और भी उत्तजित होकर बलवान बन जाते हैं। स्ट्रेप्टोमाइसिन के प्रयोग से श्रवण-शक्ति के मंद होने और खत्म होने की भी शिकायत है। क्लोरफेनिकॉल से अस्थि क्षरण और रक्त विकार की बीमारियाँ पैदा होते हुए देखी गई है। पेनस्लिन एंटिबॉयोटिक्स विभिन्न रोगों के उपचार मे बेहद लाभकारी है। कभी कभी प्राणघातक भी हो जाती है। इसी तरह आजकल प्रयोग में आने वाले एंटीबॉयाटिक जैसे एरिथ्रोमाइसिन, जेंटामाइसिन, नियोमाइसिन, कैनामाइसिन, एमीकोसिन, टोब्रामाइसिन, सिफेलोस्पोरिन, आदि लाभकारी होते हुए भी दोषरहित नहीं है।

ये गुर्दे को कमजोर करते हैं। पाचन संस्थान की क्रिया पर प्रतिकूल असर डालते हैं और श्रवण शक्ति को भी प्रभावित करते हैं। चिकित्सा विज्ञान की पत्रिका लोसेट में एक बार बड़ा ही मनोरंजक समाचार छपा था : एक किसान ने अपनी गाय को रोग मुक्त करने के लिए पेंसलीन के इंजेक्शन लगवाए। इंजेक्शन के बाद गाय तो स्वस्थ हो गई लेकिन उस गाय का दूध पीने वाले अस्वस्थ हो गए। जिन्होंने भी दूध पिया, उन्हें चर्म रोग हो गया। वेल्स के गार्ड हॉस्पिटल के कुछ डॉक्टरों ने भी कुछ दिन पूर्व औषधियों के दुष्प्रभाव की जांच-पड़ताल के लिए मरे हुए रोगियों का शवच्छेद किया। इससे पता चला कि उनमें अनेक ऐसे थे, जिनके रोग और कारण को ठीक तरह से समझा नहीं गया और बेचारे गलत इलाज के कारण औषधियों के शिकार बन गए।

खाद्य, पदार्थों को सुरक्षित रखने के लिए लंबे अर्से से रासायनिक पदार्थों का इस्तेमाल किया जा रहा है। ये पदार्थ बच्चो में टांसिल के सूजन की प्रवृत्ति को बढ़ाते हैं। आजकल चाइनीज व्यंजनों की लोकप्रियता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। चाइनीज व्यंजन लेने के बाद काफी लोग अपने सिर के अगले हिस्सों में दर्द और साथ ही साथ मुंह और सीने में थोड़ी सी जकड़न भी महसूस करते हैं। इसका एक मात्र कारण मोनो सोडियम ग्लूटामेंट (चीनी नाम: अजीनोमोटो) है। इसको प्रयोग चीनी लोग व्यंजनों को स्वादिष्ट बनाने के लिए करते हैं।

ज्येष्ठ ही नहीं, श्रेष्ठ भी बने

हम ज्येष्ठ ही नहीं, श्रेष्ठ भी बने और इसके लिए आत्मप्रशंसा के पाप से बचें। कई लोग अपनी धन-सम्पत्ति व सुविधा-साधनों का उपयोग दूसरों के लिए करते भी हैं, लेकिन उसे वापिस जता भी देते हैं। अत: जितना सुख वे किसी व्यक्ति को सहायता करके देते हैं, उससे दुगुना दु:ख पहुँचा देते हैं। आप उपकार कीजिए, अवश्य कीजिए, लेकिन उसे जताइए मत। 'नेकी कर, कुँए में डाल' कहावत याद रखिए आत्मप्रशंसा के लिए किसी की मदद मत किजिए। अच्छा कार्य करने वाले व्यक्ति को मौन रहने का अभ्यास करना चाहिए।

— साध्वी मणिप्रभाश्रीजी

श्रावकाचार के प्रमुख सोपान

—कु. संगीता जे. संघवी

जैन दर्शन में दो प्रकार के धर्म बताए हैं। साधु धर्म और श्रावक धर्म। दोनों के रास्ते अलग होने पर भी मन्जिल एक है। पर यहाँ हम श्रावक के आचारों पर अधिक प्रकाश डालेंगे। श्रावक के तीन अक्षर श्र, व, क अर्थात 'श्र' श्रद्धा का, 'व' विवेक का और 'क' कर्तव्य का सूचक है। इस प्रकार जो सम्यक्त्व में श्रद्धा रखकर अच्छे-बुरे को पहचानकर आचरण में लाता है, उसे श्रावक कहते हैं।

साधु के व्रतों को महाव्रत और श्रावक के व्रत को अणुव्रत कहा जाता है। साधु पंचमहाव्रतधारी होते हैं और श्रावक के लिए बारह व्रत होते हैं।

(१) **स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत :**— किसी भी प्रकार की हिंसा से दूर रहना चाहिए।

(२) **स्थूल मृषावाद विरमण व्रत :**— कभी-कभी मनुष्य को झूठ भी बोलना पड़ता हैं। इसलिए हो सके वहाँ तक असत्य का त्याग करना चाहिए

(३) **अदत्तादान विरमण व्रत :**— सूक्ष्म चोरी का त्याग न कर सके तो कम से कम स्थूल चोरी का त्याग तो करना चाहिए।

(४) **स्थूल मैथुन विरमण व्रत :**— श्रावक को स्वद्वारा संतोषी होना चाहिए और परस्त्रीगमन का त्याग करना चाहिए।

(५) **स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत :**— गृहस्थ को परिग्रह सीमित रखना चाहिए। क्योंकि जितना परिग्रह कम होगा उतना ही जीवन सुखी और संतोषी होगा।

(६) **दिग्परिमाण व्रत :**— सभी दिशाओं में जाने की मर्यादा निश्चित करना।

(७) **भोगोपभोग विरमण व्रत :**— भोगोपभोग अर्थात भोग और उपभोग। जो वस्तु एक ही बार भोगने के काम आती है उसे भोग्य और अनेक बार काम मे आती है उसे उपभोग कहा जाता है। इनका परिमाण निश्चित करना।

(८) **अनर्थदंड विरमण व्रत :**— बिना प्रयोजन के पाप लगने जैसी क्रिया नहीं करनी चाहिए।

(९) **सामायिक व्रत :**— अड़तालीस मिनिट तक मन, वचन और काया को अशुभ वृतियों से हटाकर शुभ ध्यान में लगाना चाहिए।

(१०) **देशावकासिक व्रत :**— 'दिग्व्रत' में दिशाओं का जो परिमाण किया गया है वह यावज्जीवन का है। उसमें क्षेत्र की विशालता रहती है परंतु "देशाककासिक व्रत' में क्षेत्र की सीमितता रहती है। पाँच-सात मील तक जाना या दो-चार घंटे एक ही स्थान पर बैठकर ज्ञान-ध्यान करना। इस प्रकार की प्रतिज्ञा करना ही "देशावकासिक" व्रत कहा जाता है।

(११) **पौषधव्रत :**— धर्म को पुष्ट करने का नाम पौषध है। बारह, चौबीस या उससे अधिक घण्टों तक सांसारिक प्रवृत्तियों को छोड़कर धर्म क्रिया करते हुए साधुवृत्ति में रहना चाहिए। उतने समय तक ब्रह्मचर्य का पालन, स्नानादि श्रृंगार का त्याग, प्रासुक पानी का प्रयोग और यथाशक्ति उपवासादि तप करना चाहिए।

(१२) **अतिथिसंविभाग व्रत :**— जिन्होंने आत्मा की उन्नति के लिए गृहस्थाश्रम का त्याग करके सन्यास ग्रहण किया है, ऐसे महात्माओं के अन्न, पानी और वस्त्रादि आवश्यक चीजों से स्वागत सत्कार करने का नाम अतिथिसंविभाग व्रत है। अतिथि अर्थात साधु या साधर्मिक भाई को खाद्य पदार्थ का दान देने के बाद स्वयं खाद्य ग्रहण करना।

उपर्युक्त बारह व्रतों के धारण करने के बाद गृहस्थ श्रावक कहलाता है।

जिस तरह बारह व्रत श्रावक के लिए जरुरी है, उसी तरह चौदह नियम भी धारण करने चाहिए। वे चौदह नियम इस प्रकार है :—

(१) **सचित :**— जिसमें जीव होता है उसे सचित्त कहा जाता है। अतः पानी, मिट्टी, अग्नि, वायु आदि का प्रमाण निश्चित करना। हरी वनस्पति और फल जरुरत से अधिक खाने में या काम में नहीं लेना चाहिए।

(२) **द्रव्य :**— सभी खाने पीने की चीजों की संख्या निश्चित करना।

(३) **विगय :**— मांस, मदिरा, शहद और मक्खन ये चार महाविगय है अतः इनसे सर्वथा दूर रहना चाहिए। दूध, दही, घी, तेल, गुड़ या शक्कर और तली हुई चीजों का एक-दो, तीन या चार यथाशक्ति त्याग करना चाहिए।

(४) **वानह :**— चप्पल, जूते, सैंडल, बुट आदि की संख्या निश्चित करना।

(५) **तंबोल :**— पान, सुपारी, मुखवास आदि की संख्या निर्धारित करना।

(६) **वस्त्र :**— पहनने के कपड़ों की संख्या निश्चित करना।

(७) **कुसुम :**— फूल आदि सुगंधित चीजों का परिमाण रखना।

(८) **वाहन :**— गाड़ी, कार, तांगा आदि में बैठने की संख्या निश्चित करना।

(९) **शयन :**— पलंग, बिस्तर, कुर्सी आदि की संख्या निर्धारित करना।

(१०) **विलेपन :**— तेल, अत्तर, चंदन, साबुन आदि का परिमाण रखना।

(११) **ब्रह्मचर्य :**— स्वस्त्री और स्वपति के लिए मर्यादा निश्चित करना।

(१२) **दिशा :**— अलग-अलग दिशाओं में जाने के लिए मील की संख्या निश्चित करना।

(१३) **स्नान :**— दिन में कितनी बार स्नान करेंगे उसका निर्धारण करना।

(१४) **भक्त :**— भोजन, पानी, शरबत आदि कितने प्रमाण में लेंगे, निर्धारण करना।

इन सभी नियमों को श्रावक को रोज उपयोग में लाना चाहिए।

गृहस्थाश्रम सभी आश्रमों का आधार है। अत: यह जितना संस्कारी, सदाचारी, पवित्र और सुदृढ होगा उतना ही व्यक्ति अधिक सुखी और संतोषी होगा। उसे सूर्योदय से पहले जागना चाहिए। देवदर्शन, गुरुवंदन, प्रतिक्रमण और सूर्यास्त से पहले भोजन कर लेना चाहिए। उसे रात्रिभोजन नहीं करना चाहिए। वैसे देखा जाए तो अहिंसा की दृष्टि से और स्वास्थ्य की दृष्टि से रात्रिभोजन का त्याग ही सर्वथा उचित है।

जीवित रहने के लिए आवश्यक सामग्री धन से ही प्राप्त होती है अत: धनार्जन प्रत्येक गृहस्थ का कर्तव्य है। न्यायोपार्जित वैभव का अल्पतम दान भी अपनी उदार मनोवृत्ति का पोषक है। कृपणता का शोषक है, सुपात्रों का तोषक है, इसलिए यथाशक्ति, यथा-सम्भव न्यायपूर्वक ही धनार्जन करने का सभी गृहस्थों को प्रयास करना चाहिए। श्रावक को उचित घर के निर्माण का भी ध्यान रखना चाहिए।

गृहस्थ को अपनी अनुकूलतानुसार प्रतिदिन का कार्यक्रम निर्धारित करना चाहिए ताकि उसकी व्यवहारिक दुनिया को और आत्मा दोनों को लाभ हो।

गृहस्थ के छह कर्तव्य इस प्रकार है, उनका पालन प्रतिदिन करना चाहिये :—
(१) देवपूजा (२) गुरुसेवा (३) स्वाध्याय (४) संयम (५) तप (६) दान

अजवायन के उपयोग

❖ अजवायन में काली मिर्च व सेंधा नमक मिलाकर गर्म पानी के साथ सेवन करने से पेटदर्द में आराम मिलता है।

❖ नीबू के रस में अजवायन, काला नमक और जरा सी हींग मिला कर रखे। भोजन के बाद जायका ठीक रहेगा और पाचन में सहायता मिलेगी।

❖ अजवायन का चूर्ण छाछ के साथ सेवन करने से पेट के कीड़े नहीं रहेंगे।

❖ अजवायन का पाउडर बनाकर सूंघने से नजला जुकाम, सिरदर्द में आराम मिलेगा।

❖ अजवायन का चूर्ण दही में मिलाकर रात को मुंहासों पर मले और सुबह गर्म पानी से धो लें। कुछ दिनों में मुंहासे ठीक हो जाएंगे।

❖ प्रसूता स्त्रियों को अज्ञवायन देने से उन्हें भूख लगेगी, खाना आसानी से हजम होगा, कमर दर्द मिटेगा व गर्भाशय की गंदगी साफ होगी।

❖ फेफड़े संबंधी रोगों में अचवायन का सेवन कफ दूर करके फेफड़े मजबूत करेगा व छाती के दर्द में लाभकारी रहेगा।

– शिवप्रसाद गौड़

ऐतिहासिक कथा

दृढ़ सम्यक्त्वी कार्तिक सेठ

पृथ्वीभूषण नामक एक नगर था। वहाँ प्रजापाल राजा राज्य करता था। वह राजा प्रजा-हित के कार्य बड़ी तत्परता से करता था; इसलिये उसका प्रजापाल नाम सार्थक हो रहा था।

उस नगर में अनेक सेठ-साहूकार रहते थे। उनमें कार्तिक सेठ बड़ा प्रसिद्ध था। राजा प्रजापाल भी उसकी इज्जत किया करता था। कार्तिक सेठ जैन धर्मी श्रावक था। उसने सम्यक्त्व व्रत धारण किया था और उसका पालन वह बड़ी तत्परता से करता था। वह अरिहंत परमात्मा और पंच महाव्रती साधु मुनिराज के सिवा किसी के आगे देवबुद्धि से और गुरुबुद्धि से सिर नहीं झुकाता था। वह व्रतों का पालन श्रद्धा पूर्वक करता था। श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं में से पांचवी प्रतिमा का पालन उसने सौ बार किया था; इसलिये लोगों ने उसका दूसरा नाम शतक्रतु रख दिया था। इस प्रकार कार्तिक सेठ धर्माराधनापूर्वक अपना जीवन बिताता था।

एक बार उस नगर के बाहर गैरिक नामक एक तापस ने अपना मुकाम लगाया। सारे नगर में यह बात फैल गई; कि नगर के बाहर एक बड़ा तपस्वी आया है। लोग तपस्वी के दर्शनार्थ फल-फूल लेकर गये। राजा भी वहाँ गया। उसने भी तपस्वी का सत्कार किया। सिर्फ नहीं आया कार्तिक सेठ। वह व्रती था; सम्यक्त्वी था; अव्रती को वह वन्दन कैसे करे! तापस को यह बात मालूम हुई; तो उसे कार्तिक सेठ पर बड़ा गुस्सा आया।

एक बार राजा ने तापस को अपने महल में भोजन के लिए आमंत्रण दिया। तापस ने सोचा—सारा नगर मुझे वन्दन करने के लिए आया; पर कार्तिक सेठ मेरे पास नहीं आया और उसने मुझे वन्दन तक नहीं किया, अत: उसे झुकाने का यह बड़ा अच्छा अवसर है।

यह सोचकर तापस ने राजा से कहा—यदि कार्तिक सेठ पीठ पर खीर की थाली रखकर मुझे भोजन कराये; तो मैं आपके यहां भोजन के लिए आ सकता हूं।

राजा ने गैरिक की बात स्वीकार कर ली। फिर राजा कार्तिक सेठ के पास जाकर बोला—सेठ! मेरे यहां गैरिक नामक तपस्वी ऋषि भोजन के लिए आने वाले हैं; उन्हें भोजन परोसने के लिए आप पधारे तो अच्छा होगा।

राजा की बात सुनकर सेठ बोले—हे राजन्! मैं सम्यक्त्व व्रतधारी हूं; इसलिए यह कार्य करने में असमर्थ हूं; पर आपके राज्य में रहता हूं; इसलिए राजा के आदेश के पालन के लिए उस तापस को भोजन अवश्य कराऊँगा; पर उसमें मेरा भक्तिभाव नहीं रहेगा।

राजा चला गया। निश्चित समय पर तापस राजमहल में भोजन के लिए आया। कार्तिक सेठ वहाँ हाजिर था। उसने थाली में खीर परोसी; पर तापस ने भोजन नहीं किया।

वह तो सेठ को अपने आगे झुकाना चाहता था। उसने कहा—सेठ मेरे आगे झुक कर अपनी पीठ पर थाली रखे; तो ही मैं भोजन करुंगा।

राजा के आदेश के कारण सेठ को झुकना पड़ा। सेठ की उँगली में एक अँगूठी थी; उसमें जिनप्रतिमा अंकित थी। सेठ ने उस जिन प्रतिमा को भक्तिभाव से नमन किया और

उस तापस के आगे झुक गया।

तापस ने सेठ की पीठ पर गरम गरम खीर की थाली रखी और वह खीर खाने लगा। गरम खीर के कारण सेठ की पीठ जलने लगी; पर सेठ ने सब दुःख समभाव से सहन किया। तापस भोजन करते करते सेठ की नाक/भी उँगली से घिसता जाता था और उससे कहता था—देख तू मेरे पाँव पड़ने नहीं आया; इसलिए मैं तेरी नाक काटता हूं। और अब मैं बार बार तुझे नमन कराता हूं।

सेठ ने सारा अपमान समभाव से सहन किया और समता भाव से वेदना भी सहन की।

तापस का भोजन पूरा हुआ। भोजन करके तापस अपने आश्रम में चला गया। इधर खीर की थाली अत्याधिक गरम होने के कारण सेठ की चमड़ी से चिपक गई। बड़ी मुश्किल से राजा ने सेठ की पीठ पर से यह थाली अलग की।

अब सेठ ने सोचा—यदि मैंने पहले से दीक्षा ले ली होती; तो आज यह अपमान सहन न करना पड़ता।

यह सोचकर सेठ ने वैराग्य भाव से एक हजार आठ वणिक पुत्रों के साथ श्रीमुनिसुव्रतस्वामी भगवान के पास दीक्षा ली और द्वादशांगी का अध्ययन किया। बारह वर्ष तक चारित्र पालन करके कार्तिक मुनि का जीव देह त्याग के पश्चात् सौधर्मेन्द्र बना।

गैरिक तापस भी अज्ञान तप करता हुआ मृत्यु के पश्चात् सौधर्मेन्द्र का वाहन ऐरावत हाथी बना। फिर वह देव हाथी का रूप धारण करके इन्द्र के पास आया। इन्द्र जब उस पर आरोहण करने लगा; तब अवधिज्ञान से उस हाथी को यह मालूम हुआ कि यह कार्तिक सेठ है। यह जानकर वह वहाँ से दूर भागने लगा; पर इन्द्र ने उसे मजबूती से पकड़ लिया। फिर सौधर्मेन्द्र उस पर सवार हो गया।

यह देखकर हाथी ने सौधर्मेन्द्र को डराने के लिए दो रूप बनाये; तब सौधर्मेन्द्र ने भी दो रूप किये। हाथी ने जब चार रूप किये; तब सौधर्मेन्द्र ने भी चार रूप किये। इस प्रकार सौधर्मेन्द्र ने हाथी को धमकाकर चलाया।

फिर सौधर्मेन्द्र को अवधिज्ञान से मालूम हुआ कि यह तो गैरिक तापस का जीव है; तब वह बोला—हे गैरिक! अब तू कैसे छूट सकेगा? क्या तेरा पूर्व जन्म तू नहीं जानता? तूने मेरी पीठ पर खीर की थाली रख कर भोजन किया था; इसीलिए तू अब मेरा वाहन बना है। यह ध्यान में रख; कि किया हुआ कर्म भोगे बिना छूटता नहीं है।

यह सुनकर हाथी लज्जित हुआ। उसने पुनः अपना मूल रूप धारण कर लिया और शांत होकर वह इन्द्र का सेवक वाहन बन गया।

सम्यक्त्व और मिथ्यात्व में यही अंतर है। सम्यक्त्व की आराधना से जीव का उत्तरोत्तर विकास होता जाता है; मिथ्यात्व के कारण जीव का विकास रूक जाता है और उसका अधःपतन भी हो जाता है। अपने सम्यक्त्व के कारण कार्तिक सेठ सौधर्मेन्द्र बना; पर मिथ्या आराधना के कारण गैरिक तापस उसी सौधर्मेन्द्र का वाहन देव बना। सम्यक्त्व के समान जीव का हितकारी कोई नहीं है और मिथ्यात्व के समान जीव का अहित करने वाला अन्य कोई नहीं है। मिथ्यात्व ही जीव को चतुर्गति में भ्रमण कराता है; और उसे दुःखी बनाता है; इसलिए सम्यक्त्व की आराधना दृढ़ता पूर्वक करनी चाहिये।

—श्री बसन्तीलाल जैन.

बोधकथा

महावीर की निष्पक्ष दृष्टि

श्री. महेन्द्र जे. संघवी (थाने)

मगध नरेश राजा श्रेणिक भगवान महावीर के अनन्य भक्त थे। उनके मन में मृत्योपरांत अपनी गति जानने की जिज्ञासा जागृत हुयी। भगवान महावीर सर्वज्ञ थे। भूत, वर्तमान और भविष्य का संपूर्ण ज्ञान था उन्हें। सब कुछ उन्हें अपनी आँखों के सामने चलचित्र की भाँति नजर आता था।

श्रेणिक महाराजा ने भगवान के समक्ष जाकर नम्रतापूर्वक पूछा— "हे प्रभो! मृत्योपरांत मेरी क्या गति होगी?"

भगवान ने कहा— "नरकगति"

राजा आश्चर्य में पड़ गया। "और गोशालक की" उसने पूछा।

भगवान ने कहा— "सद्गति"

अब तो उसके आश्चर्य का पारावार न रहा। असमंजस में पड़ गया वह। फिर भी भगवान महावीर पर अटूट श्रद्धा थी उसे।

अपनी शंकानिवारण हेतु उसने भगवान से फिर पूछा— "भगवन्! यह क्या? आपके भक्तों को नरक और निंदकों को स्वर्ग। यह कैसा न्याय है?"

"निष्पक्ष न्याय है यह। जीवन के अंतिम क्षणों में गोशालक को अपनी भूल का अहसास हो गया था। पश्चाताप की अग्नि में उसने अपने पापों की होली जला दी थी। जीवन में स्नेह की अपेक्षा साधना का महत्व अधिक है—"भगवान ने स्पष्ट करते हुये कहा।

गोशालक की ही तरह भगवान की पुत्री प्रियदर्शना और जमाई जमालि के बारे में हुआ। प्रियदर्शना ने तो अंत में प्रभू की शरण स्वीकार कर ली थी। लेकिन जमालि अंत तक अडिग रहा। वह अंत तक अविचलित रुप से भगवान महावीर का कट्टर विरोधी रहा।

एक बार जमालि की मृत्यु के समाचार सुनकर गौतम स्वामि ने प्रभु वीर से जमालि की गति के बारे में पूछा। भगवान ने कहा—"सुगुरु, सुदेव और सुधर्म की विराधना करनेवाला जीव जिस गति में जाना चाहिये उस गति में वह भी गया। किंतु उसका दिल साफ था, स्वभाव से सरल था और भोगोपभोग में 'रुचि नहीं' रखता इसलिये देरसबेर वह सिद्ध गति को जरुर प्राप्त होगा।

स्वयं के कट्टर निंदक और परम आराधक, दोनों के प्रति समभाव था महावीर के पास। वे स्नेह की अपेक्षा सत्य का साथ देते थे।

समाचार दर्शन

सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक स्थानकवासी जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म० का संथारा में समाधिपूर्वक स्वर्गारोहण उत्तराधिकारी के रूप में पं. हीरामुनि नये आचार्य

निमाज—सामायिक व स्वाध्याय के प्रणेता स्थानकवासी जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म. का संथारा में समाधिपूर्वक स्वर्गवास २२ एप्रिल को हुआ। पाली (राजस्थान) के निकट निमाज गांव में उन्होंने ८१ वर्ष की उम्र में १२ एप्रिल को संथारा ग्रहण किया था।

आचार्य श्री हस्तीमलजी म. का जन्म संवत १९६७ में पीपाड़ में श्री केवलचंद बोहरा के यहाँ हुआ था। दस वर्ष की उम्र में उन्होंने दीक्षा ग्रहण की व १६ वर्ष की आयु में जोधपुर में आचार्यपद पर प्रतिष्ठित हुए। इतनी कम उम्र में इतने लम्बे समय तक आचार्यपद धारण करने वाले वे एक मात्र आचार्य थे। समाज में साहित्य के निर्माण और प्रचार/प्रसार तथा नैतिक शिक्षण के लिये वे सदा प्रेरणा देते थे। उन्होंने समाज को ध्यान, सामायिक व स्वाध्याय के लिये प्रेरित कर नयी दिशा दी।

संथारा दरम्यान दर्शनार्थ लोगों का आना जारी था। अंतिम दर्शनार्थ लोगों की जबरदस्त भीड़ उमड़ पड़ी थी। प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री भैरोसिंह शेखावत, पर्यटन मंत्री सुश्री पुष्पा जैन केन्द्रीय मंत्री श्री अशोक गहलोत आदि कई नेतागण भी अन्तिम दर्शनार्थ आये थे।

दिवंगत आचार्यश्री हस्तीमलजी ने संथारे से पूर्व उत्तराधिकारी तय करके एक बंद लिफाफे में नाम अंकित कर रखा था। जो उनकी अन्त्येष्टि के बाद आयोजित श्रद्धांजली सभा में संघ अध्यक्ष श्री मफतलाल मुणोत ने सभी के समक्ष खोला जिसका सार निम्नांकित है—

"आगे संघ की भावी व्यवस्था कैसी होगी! संघ के दोनों मुनियों के नेतृत्व में संघ की सारी व्यवस्था यथावत चलती रहेगी। मानमुनिजी संघ हित में मार्गदर्शन करेंगे तथा साधु-साध्वियों एवं वैरागियों को शिक्षा दीक्षा का प्रशिक्षण देंगे। पं. हीरामुनि सारणा वारणा से तथा मान मुनि के सुझावों पर गौर कर समस्त साधु साध्वियों को उचित मार्गदर्शन व संघ संचालन करेंगे। प. हीरामुनि संघ के विधि विधानों के तहत रहते हुए सदैव प्रेमपूर्वक समस्त साधु व श्रावक मंडल साथ में रहकर सदैव संघ हित में कार्य करेंगे अतः मैं पं. हीरामुनि को भावी आचार्य एवं मानमुनि को उपाचार्य पद पर मानता हूँ।"

जैनागम में पंडितमरण की अत्यधिक महिमा दर्शायी गयी है। आचार्यश्री ने जीवन की सांध्य बेला में जिस सजगता एवं जागरुकता से समाधिमरण स्वीकार किया, वह उनके तेजस्वी जीवन का ज्वलन्त प्रतीक है।

'शाश्वत धर्म' व 'परिषद' परिवार आचार्यपद के प्रति अपनी श्रद्धांजली अर्पित करता है।

आचार्य श्री पदमसूरीश्वरजी की निश्रा में विविध कार्यक्रम

आचार्य श्री जिनेन्द्रसूरीश्वरजी के पट्टधर आचार्य श्री पदमसूरीश्वरजी की निश्रा में १९ मई को बूसी नगर (राजस्थान) में प्रतिष्ठा; डायलाना में १३ मई से २३ मई तक अंजनशलाकाप्रतिष्ठा; मुण्डारा में १० जून से २२ जून महावीर स्वामी आदि जिनबिम्बो की अंजनशलाका प्रतिष्ठोत्सव; पालडी (गुलाबगंज) में १ जुलाई से ५ जुलाई तक प्रतिष्ठोत्सव; विसलपुर में संभवनाथ आदि जिनबिम्बो की प्रतिष्ठा महोत्सव कार्यक्रम संपन्न होकर आषाड़सुदि में वालराई (जिला-पाली) में चातुर्मास हेतु प्रवेश करेंगे।

सांचोर में श्री राजेन्द्रसूरि जैन ज्ञान व स्वाध्याय मंदिर बनेगा

सांचोर—गच्छाधिपति जैनाचार्य श्रीमद्विजयजयंतसेनसूरीश्वरजी का मरूधर आंचल में विचरण करते हुए मुनिमंडलसह यहाँ आगमन होने पर भव्य सामैय्या किया गया। प्रवचन में मंगलवाणी सुनकर शा आसमलजी गुणेशमलजी संघवी व गांधीमुथा हिम्मतमलजी मुलतानमलजी परिवार द्वारा श्री राजेन्द्रसूरि जैन ज्ञान व स्वाध्याय मंदिर निर्माण करवाने का तय किया गया। खादमुहूर्त द्वि० वैसाखसुदि ९ को किया जायेगा। भक्तामरपूजन का आयोजन भी किया गया।

दि. १४-४-९१ कों प्रात: विहार कर थराद रोड़ पर सांचोर से २ किलोमीटर की दूरी पर संघवी सागरमलजी दुदाजी के फार्म (खेत) पर आचार्यश्री चतुर्विध संघ सह पधारे। स्व० संगरमलजी की स्मृति में श्री गुरुराज राजेन्द्र सेवा मंदिर निर्माण हेतु उनके परिवार द्वारा जमीन भेंट देने की घोषणा की गयी। **-प्रेषक : हडमतकुमार खीमराजजी संघवी (सांचोर)**

पालीतणा में उद्यापन

पालीताना—श्री राजेन्द्र भवन में पू. आचार्य की जयंतसेन सूरिजी म. सा. की आज्ञावर्ती गुरुणीज्ञी श्री साध्वीजी कंचनश्रीजी की शिष्या साध्वीजी लावण्यश्रीजी की शिष्या साध्वीजी दमयंतीश्रीजी एवं साध्वीजी सूर्योदयाश्रीजी म. सा. का वरसीतप पारणा एवं साध्वीजी कैलाश श्रीजी की ओलीजी के उपलक्ष में उद्यापन हेतु २१ छोड़ का उजमणा तथा अष्टान्हिका महोत्सव का आयोजन दि. ९-५-९१ से १६-५-९१ तक सायला निवासी शा. छगनलाल तेजाजी सोलंकी परिवार की ओर से किया गया।

साध्वी श्री दमयंतीश्रीजी

सा. सूर्यादयाश्रीजी

सा. कैलासश्रीजी

समाचार-सार

● **श्रीलक्ष्मणी तीर्थ** - प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष भी चैत्र सुदि पूर्णिमा को श्री शत्रुंजय तीर्थ पट के सामुहिक दर्शन, भातावितरण श्री सिद्धाचलतीर्थ नवाणुप्रकारी पूजन एवं शाम को अ. भा. सौधर्म वृहत्पागच्छीय जैन श्वेताम्बर श्रीसंघ अलीराजपुर की ओर से स्वामीवात्सल्य का आयोजन किया गया। रात्री को भक्तिभावना, गरबा के कार्यक्रम उत्साहपूर्वक सम्पन्न हुए। सभी कार्यक्रमों को सफल बनाने में अलीराजपुर संघ, लक्ष्मणी तीर्थ ट्रस्ट, अ. भा. श्री रा. जैन नवयुवक, महिला बाल एवं बालिका परिषदों के सभी सदस्यों ने पूर्ण सहयोग दिया।

● **अलीराजपुर** - श्री महावीर जन्म कल्याणक महोत्सवनिमित्त वरघोड़ा, संघपूजन, श्री महावीर पंचकल्याणक पूजन आदि कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। प्रातः स्वामी वात्सल्य झाबुआ निवासी श्री अंतिमकुमार धनराजजी जैन परिवार की ओर से किया गया। अ. भा. श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद शाखा अलीराजपुर द्वारा अस्पताल में मरीजों को फल एवं मिठाई वितरित की गई एवं गरीबों को सेव वितरीत की गई।

● **बम्बई** - श्री थराद त्रिस्तुतिक जैन संघ (बम्बई) द्वारा श्री राजेन्द्र गुरु मन्दिर के नये ट्रस्टीयों के चुनाव हुए जिसमें निम्नानुसार पदाधिकारी नियुक्त किये गए- अध्यक्ष-मोरखीया सेवंतीलाल कीर्तिलाल, उपाध्यक्ष-वोरा कीर्तिलाल पीथाचंद महामंत्री-वोरा चन्द्रकान्त भूदरमल कोषाध्यक्ष-वोरा वाघजीभाए कालीदास एवं सहमंत्री - संघवी रसीकलाल मुदरमल।

● **कलकत्ता** - - श्री चन्द्रप्रभ सागरजी के ध्यान विषयक कुछ प्रमुख प्रवचनों का संकलन ध्वनि मुद्रित किया गया है। ऑडियो कैसेट (तीन कैसेटों का सेट) ६६ रुपये में निम्नांकित पते से प्राप्त कर सकते है। **श्री जीतयशाश्री फाउन्डेशन रुम नं.** 28, 9/सी, एसप्लानेडरो (पूर्व) कलकत्ता-69

● **आकोली** - पू. मूनिराज श्री जयानंद विजय जी म. सा.की निश्रा में आदिनाथ जैन नवयुवक मंडल की मिटिंग रखी गई जिसमें सर्वसम्मति से मंडल द्वारा एक "आदिजिन भक्ति संगम स्मारिका" का प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया एवं निम्नांकित पदाधिकारी सर्वानुमति से मनोनीत किये गये। अध्यक्ष-श्री पारसमलजी टीलचंदजी, उपाध्यक्ष - श्री चंदनमलजी छोगालालजी, सचिव-श्री पोपटलालजी वीरचंदजी, एवं कोषाध्यक्ष-श्री मंछालालजी नवलमलजी।

श्री राजेन्द्र जैन धार्मिक पाठशाला के विद्यार्थियों की परीक्षा ली गई एवं उत्तीर्ण बालक-बालिकाओं को श्री संघ आकोली द्वारा पुरस्कृत किया गया।

● **दिल्ली** - 'उर्ध्वचेता प्रतिष्ठान' के तत्वावधान में दीपावलीपर 'जैन संत परिचय कोश' का प्रकाशन किया जा रहा है। संपर्क सूत्र-डॉ. अशोक जैन, उर्ध्वचेता प्रतिष्ठान, बी-5/263 यमुनाविहार-दिल्ली-110053

● **वांगणी** - थाना जिले के बदलापुर और नेरल के बीच वांगणी गाव में विहार दरम्यान साधु-साध्वियों के उपयोगार्थ उपाश्रय का उद्घाटन महावीर जन्म कल्याणक के अवसर पर किया गया।

● **मन्दसौर** - अ. भा. श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद शाखा-मन्दसौर के चुनाव केन्द्रिय शिक्षामन्त्री श्री सुरेन्द्र लोढ़ा की उपस्थिति में सानन्द सम्पन्न हुए जिसमें निम्न पदाधिकारी सर्वानुमति से नियुक्त किये गये। अध्यक्ष-श्री मोहनलालजी खाबिया, सचिव-श्री देवेन्द्र कुमारजी चपरोत, कोषाध्यक्ष-श्री अनोखीलालजी जैन एवं प्रचारमंत्री श्री पारसजी लोढ़ा।

साभार स्वीकार

● **तीर्थंकर (जैन जन जागरण विशेषांक)** - सम्पादक : डॉ. नेमीचन्दजी जैन, वर्ष २०; अंक ११-१२ मार्च-अप्रैल १९९१; प्राप्ति स्थान : हीरा भैया प्रकाशन, ६५ पत्रकार कॉलोनी, कनाड़िया मार्ग, इन्दौर-४५२००१ (म. प्र.); मूल्य : २० रुपये; पृष्ठ-१६०

करीबन सवा वर्ष पूर्व विद्वान् डा० नेमीचंदजी जैन ने जैन समाज के आचार्यों, साधुसाध्वियों, नेताओं, विद्वानों, पण्डितों, पत्र-सम्पादकों, प्रोफेसरों, कार्यकर्ताओं आदि के नाम एक विस्तृत खत लिखा था, जिसमें गत दो दशकों में हुए चाहे-अनचाहे, इष्ट-अनिष्ट परिवर्तनों की ओर संकेत करते हुए एक सप्त सूत्री योजना रखी थी। प्रास्तावित मुद्दों पर प्राप्त चिन्तन/विचार/उत्तरों का संकलन प्रस्तुत विशेषांक में किया जाने से यह विशेषांक जन जागरण दस्तावेज बन गया है। आज हमारे सामने खड़ी समस्याओं का सचोट प्रस्तुतिकरण एवं निवारक उपायों का योग्य मागदर्शन विभिन्न विचारकों द्वारा दिया गया है। समाज के प्रति जो भी अपना कुछ उत्तरदायित्व समझते हैं ऐसे व्यक्तियों को यह अंक अवश्य पढ़ना चाहिये।

● **समाधान की राह पर** - लेखक : मुनिराज श्री जयानन्दविजयजी; प्रकाशक : शा घेवरचन्द भबुतमल तलावत परिवार-आहोर (राज०); प्राप्ति स्थान : शाश्वत धर्म कार्यालय, जामली नाका, थाने-४००६०१; मूल्य-सदुपयोग पृष्ठ-१३८

प्रस्तुत पुस्तक में दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र के विषय में उठती शंकाओं का समाधान प्रश्नोत्तर के रूप में दिया गया है।

● **समाधान की रश्मियाँ** - लेखक व प्राप्तिस्थान उपरोक्त अनुसार; प्रकाशक-श्री श्वेताम्बर जैन संघ - धाणसा (जिला-जालोर) राजस्थान; मूल्य-सदुपयोग; पृष्ठ-१५२

धाणसा श्री संघ द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक में धाणसा नगर में सम्पन्न पूज्य मुनिराज श्री जयानन्दविजयजी, सम्यग्रत्नविजयजी, हरिश्चंद्रविजयजी आदि ठाणा के चातुर्मास की झलक मे साथ विविध विषयों पर ५५४ प्रश्नोत्तर प्रकाशित किये गये है। लेजर टाइप सेटिंग एवं चार रंगी कवरपृष्ठ के साथ ऑफसेट में मुद्रित यह पुस्तक स्वाध्यायी पाठकों के लिये विशेष उपयोगी है।

● **प्रवचन रत्नाकर** (भाग-३); प्रवचनकार : श्री कानजी स्वामी; सम्पादक : डॉ. हुकमचंन्द भारिल्ल; प्रकाशक : पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-४ बापू नगर, जयपुर-३०२०१५; मूल्य-दस रुपये; पृष्ठ-३७२

श्री कानजी स्वामी द्वारा समयसार की गाथा ६९ ते ९१ तक के प्रवचन प्रस्तुत पुस्तक में संकलित किये गये है।

● **मेवाड़ का यशस्वी कवि छन्दराज पारदर्शी**-लेखक-श्री प्रल्हाद नारायण बाजपेयी, सम्पादक श्री भगवन्तराव गाजरे 'शान्त'; प्रकाशक व प्राप्तिस्थान-कुलदीप प्रकाशन २६१/४ उत्तरी आयड़, उदयपुर-३१३००१।

आशु कवि श्री छन्दराज पारदर्शी का जीवनचरित्र व प्राप्त शुभकामनाओं का प्रकाशन किया गया है।

शाश्वत धर्म को भेंट :—

२५००/-श्री श्वे. जैन संघ उदराणां की ओर से प्रतिष्ठोत्सर्क की अवसर पर आचार्य श्री जयंत सेनसूरिजी की प्रेरणा से सप्रेम भेंट

५०/- श्री राजमलजी जमींदार (राजगढ़वाले) इन्दौर परिवार की ओर से महावीर जयन्ती के दिन पौत्ररत्न की प्राप्ति पर सप्रेम भेंट।

१००/- पू. आचार्य श्री विजय अशोकरत्नसूरिजी म. सा. की प्रेरणा से हासपेट में अंजन शलाका एवं दो मन्दिरों में प्रतिष्ठोत्सव के उपलक्ष में श्री श्वे. जैन संघ हासपेट द्वारा सप्रेम भेंट।

आपका पत्र मिला...

....शाश्वत धर्म के पद चिन्ह अमिट बनते जा रहे हैं अब इसके कदमों की आहट सुनाई देती है। जिसे भी प्रतिक्षा हो, वह अनुगमन कर सकता है, उसके कदम ठोस है, यात्रा सार्थक होगी गन्तव्य मिलेगा।

-मुनि विमलसागर

....आपके द्वारा भेजी गई 'शाश्वत धर्म' मासिक मिली। किताब का अवलोकन किया। किताब बहुत सुन्दर है। 'आराधना पंच परमेष्ठी की' आचार्य श्री जयंतसेनसूरिजी का लेख काफी अच्छा लगा।

-अजय कासलीवाल-इन्दौर

:....शाश्वत धर्म का अप्रैल ९१ अंक मिला। पढ़कर अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव हुआ। 'ज्ञान कसौटी' जैन विषयों के बारे में उपयोगी जानकारी प्रदान करती है। जिलेटीन के बारे में बहुत कम लोग जानते होंगे कि यह केप्सूलों में प्रयोग होता है।

-प्रकाश चोरडीया, श्रीमती संतोष चोरड़ीया-कटक (उड़ीसा)

....शाश्वत धर्म अपैल ९१ के अंक में ' निगल रहे हैं हड्डियां हम सब' निबन्ध पढ़ा। रचना प्रेरणाप्रद एवं चिन्तनशील है। इसी तरह भविष्य में रचना देते रहें। मैं पत्रिका के मंगलमय भविष्य की शुभ कामना करता हूँ।

-कुन्दन सुराणा-पाली (राज.)

....शाश्वत धर्म अप्रैल ९१ का अंक प्राप्त हुआ। 'निगल रहे हैं हड्डियां हम सब' (लेखक डॉ. श्री नेमिचंदजी जैन) लेख सामयिक व जानकारीपूर्ण लगा। सिर्फ जिलेटिन ही नहीं अन्य भी कई रोजाना उपयोग में आने वाले खाद्य पदार्थ हैं जो हमें परोक्ष रूप में मांसाहारी बना देते हैं। खान-पान की शुद्धता आजकल एक समस्या सी बन गई है। यदि कोई संगठन समर्पण से यह कोशिश करे एवं यह नियम बनाने हेतु सरकार को बाध्य करे कि प्रत्येक खाने की वस्तु पर उसमें मिलाये गये तत्त्वों की सूची छापी जाये तो सम्भव है कुछ हद तक हम मांसाहार से बच सकते हैं।

अभयकुमार बांठिया-बैंगलोर

....अप्रेल ९१ नुं मासिक शाश्वत धर्म मळ्युं. वांची घणोज आनंद थयो छे...

-विपिनकुमार संघवी-सूरत

....आचार्य श्री जयंतसेनसूरिजी द्वारा रचित श्री सम्मेतशिखर जी सिद्धक्षेत्र तीर्थ वन्दना बहुत अच्छी लगी। अन्य लेख भी बड़े अच्छे हैं एवं हर व्यक्ति के लिये बहुत उपयोगी है निकट भविष्य में ज्ञान वृद्धि एवं आत्मोन्नति के लिये प्रयास करते रहें ऐसी शुभ भावनाएँ....

-शांतिलाल राजेन्द्रकुमार भटेवरा-ढोढर (म.प्र.)

...."शाश्वत धर्म" निरन्तर/नियमित मिल रहा है। रुप-रंग की प्रगति से काफी संतुष्ट हूं। बधाई!

-नेमीचन्द चैन (सम्पादक-तीर्थंकर मासिक)

જીવતાં મરણ

—શ્રી કીર્તિલાલ હાલચંદ વોરા થરાદવાલા

(અગત્યની નોંધ : આ લેખ લખવાની પ્રેરણા હું માર્ચ ૧૯૯૧ માં મુંબઈ આવ્યો હતો તે સમયે શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર પ્રેરિત સિધ્ધાંતો પર દર ગુરૂવારે શ્રીમતિ સરયુબેન રજનીભાઈ મેહતા પ્રવચન આપે છે ત્યાં જવાનું થયું. મોરબી હાઉસ, ગોવા સ્ટ્રીટ મીન્ટ રોડ ત્રીજે માલે પોતાના અને સગાઓ ના ફ્લેટના ચાર પાંચ રૂમમાં સ્ત્રી-પુરુષો બેસે છે. લગભગ બપોર ઉપરાંત સ્ત્રી-પુરુષો એક ધ્યાનથી આ પ્રવચન સાંભળે છે સુંદર લાઉડ-સ્પીકરની વ્યવસ્થા છે. PIN DROP SILENT હોય છે. ઓગણીસમી સદીના મહાન સંત શ્રીમદ્ રાજચંદ્રના બનાવેલા ગદ્ય-પદ્ય ના આધારે શ્રીમતિ સરયુબેન જે શૈલી થી પ્રવચન આપે છે તે ખરેખર એક સંસારી તરીકે તો ઘણુંજ પ્રભાવશાલી હોય છે. સાંભળનાર પ્રત્યેક વ્યક્તિના દિલમાં પ્રવચનનો એક એક શબ્દ ઘર કરી જાએ તેવી શૈલી-મધુર અવાજ પ્રત્યેક વાક્યો બોલતા વખતે ઉપસતા તેમના ભાવ-ધીમી અને કલાત્મક ભાષા આવી સુંદર રીતે એક સંસારી સન્નારી દ્વારા અપાતું પ્રવચન સાંભળતી વખતે ખરેખર લાગે છે કે આપણે એક મહાન વિદુષી સન્નારી નું વ્યાખ્યાન સાંભળી રહ્યા છીએ. શ્રીમતિ સરયુબેન મેહતા મોરબીના પ્રતિષ્ઠિત શ્રેષ્ઠિ સ્વ. શ્રી મનસુખલાલ જીવરાજ મહેતાના પુત્રવધુ અને જૈન વિદ્વાન સ્વ. શ્રી. ભોગીલાલ ગી. શેઠના પુત્રી છે. તેઓ શ્રીમદ્ રાજચંદ્રના ઉપર એક મહા નિબંધ.લખી P.H.D. ની માનદ ઉપાધી મેળવી છે. આ બંને કુટુંબો શ્રીમદ્‌ના પરમ ઉપાસકો છે. અને તે ત્યાં સુધી કે આ બંને કુટુંબાનો દરેક વ્યક્તિ આ સંસારનો ધંધો-વ્યવહાર જે કંઈ કરે છે તે બિલ્કુલ અનાસક્તિ ભાવે/નિર્દોષ ભાવે કરે છે અને શ્રીમદ્‌ના સાહિત્યના પ્રચારનું મહાન કાર્ય કરે છે. વાચક ગણને એટલું કહીશ કે શ્રીમતિ સરયુબેન ને એક વખત જરૂર સાંભળે..લેખક)

દેહ છતાં જેની દશા, વર્તે દેહાતીત
તે જ્ઞાનીનાં ચરણમાં હો વંદન અગણિત

-શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર

અનાસક્તિ ભાવ રાખી જો આપણે આ સંસારમાં કરવી પડતી બધીજ ક્રિયાઓ કરીએ તો તેનું કર્મબંધન હલવું થાય છે. સુવ્વીની સજા માત્ર સુધી જ પતી જાએ એવી આ સ્થિતિ છે.

જન્મ મરણ ના ફેરા જો ટાળવા હોય તો આ મનુષ્યભવમાં જ આપણે એવી કરણી

કરવી જોઈએ કે મૃત્યુ બાદ આ જીવ અન્ય લોકમાં થઈને પણ મોક્ષના માર્ગે આગલ ધપી શકે છે. જીવતાં મરણ આ લેખનું શિર્ષક છે. કોઈ ને લાગે કે જીવતાં-મરણ એટલે વળી શું? એનો અર્થ એ થાય છે કે દેહ ધારણ કરવા છતાં પણ જીવ એ દેહ પોતાનો નથી એ રીતે દેહાતીત ભાવ થી જીવે છે. અને આવી ભાવના સાથે જીવવું એટલે શરીર ને આત્માથી અલગ પાડવું એ છે. આ દશા પામવી એ કંઈ સરલ તો નથી જ ઘણું જ મુશ્કેલ છે. પરંતુ અશક્ય તો નથી જ. આ માટે બે દૃષ્ટાંત સમઝવા જેવા છે.

ડાંગર એટલે ફોતરાવાલા ચોખા આ ડાંગરમાંથી ફોતરા અને ચોખા અલગ કરવા માટે ડાંગર ને ખાંડણીયામાં નાખી છડવા પડે છે અને એ રીતે. ખાંડણીયામાં કુટાતાં ડાંગરમાથી ચોખા અને ફોતરા અલગ અલગ થાય છે. આ રીતે કષ્ટ ભોગવતાં ભોગવતાં જ આત્મા શરીર થી અલગ હોવાનો અનુભવ કરે છે.

આવું જ બીજું દૃષ્ટાંત છે શ્રીફલનું લીલું શ્રીફલ કે જેમાં પાણી હોય છે ત્યારે શ્રીફલ ની કાચલી સાથે કોપરૂ ચૌટેલ હોય છે. આ અવસ્થામાં જો શ્રીફલ ને ફોડવામાં વધેરવામાં આવે તો કાચલી તુટતા જ કોપરાના પણ ટુકડા થાય છે આનો મતલબ આપણે આપણા આત્મા અને શરીર સાથે સરખાવીએ છીએ તો શરીર એટલે કાચલી અને કોપરૂ એટલે આત્મા અને તેમાં રહેલું પાણી એટલે મોહ/આશક્તિ પાણીવાળા નારીયલ ને ફોડતા જેમ કોપરાના પણ ટુકડા થઈ જાઈ છે તેમ મોહ આશક્તિ ને વશ આત્મા પણ શરીર રૂપી કાચલી ને પડતાં સુખ દુખનો સારો નરસો અનુભવ કરે છે. પરંતુ જો તપ જપ અને સમભાવ દ્વારા શરીર પ્રત્યેની આશક્તિ દૂર થાય તો શરીર ને પડતા કોઈ પણ દુખ કે સુખની અનુભૂતિ આત્મા ને થતી નથી. શરીર ને સુખ મળે તો આત્મા નથી પ્રસન્ન થતો કે શરીર ને દુખ પડે તોનથી આત્મા દુ:ખી થતો. આનું નામ તે દેહાતીત ભાવ. પાણી સુકાઈ ગયા પછી જેમ નારીયલ ની કાચલીમાઁ કોપરા નો ગોલો અલગ તઈ જાય છે અને આવું સુકુ નારીયલ ફોડતાં કોપરાનો ગોલો આખોજ નીકળે છે. તે જ પ્રમાણે જે આત્મા મોહ અને આશક્તિ ભાવ ને દૂર કરી આ દેહ માં વસવા છતાં તે દેહ થી અલગ હોવાનો અનુભવ કરે છે અને દેહ ને પડતાં દુખો તેણે લેશ પણ અસર કરતાં નથી.

શરીર ના કોઈ પણ અંગ માં સેપ્ટીક (પરૂ) થતાં તે પરૂ વધુ આગલ ન વધે એ માટે એટલા ભાગમાં પરૂ થયેલ હોય તે ભાગ ને ડોક્ટરો કાપી નાખે છે. અને આ રીતે આપણે કેટલાયના હાથ પગ કપાતા જોઈએ છીએ. હોસ્પીટલમાં આવા હાથ પગ કાપી નાખ્યા બાદ કોઈ પણ વ્યક્તિ પોતાના એ કપાયેલા હાથ પગ ને સાથે લઈ જતા નથી તે તો કચરા ટોપલીમાં જ જાય છે. કપાયેલું અંગ પોતાનુંજ છે. છતાં તેના ઉપર મોહ થવાને બદલે સુગ આવવા લાગે છે. કારણ તે કપાવેલ અંગ સડી જતાં દુર્ગંધમય બની ગયું હોય છે. નકામું બની ગયું હોય છે.

ગિરનાર પર્વત ઉપર તપ કરી રહેલા મુનિ રહનેમિ જ્યારે સાધ્વીજી થયેલાં રાજુલ ઉપર મોહ પામે છે. ત્યારે રાજુલ તેમને કહે છે કે :-

અસૂચી કાયા છે મલ મુત્ર ની ક્યારી
તમને એવડી લાગી કેમ પ્યારી રે

દેવરીયા મુનિવર ધ્યાનમાં રહેજો...

આ શરીરમાં લોહી, માંસ, હાડકાં અને મલ મૂત્ર સિવાય બીજું કંઈજ નથી તે આપણે જાણીયે છીયે. મટન મારકીટ પાસે થી પસાર થતાં ત્યાં લટકાવેલા માંસા પીંડ જોઈ આપણે આંખ સિંચી જઈએ છીયે, મચ્છી-મારકીટ પાસેથી પસાર થતાં આપોઆપ નાક બંધ કરવું પડે છે. થઈ જાય છે. મારા-મારી ખુના-મરકીના અવાજે સાંભળાતાં કાન બંધ કરવાનુ મન થાય છે. અને છતાં પણ આવાજ હાડ્ડ-માંસ-લોહી મલ-મૂત્રના સંગ્રહ સમા આ શરીર ઊપરનો લેશ પણ મોહ છોડવા આપણે તૈયાર નથી. તેનું કારણ એ છે કે આ બધું સુગ ચડે એવું એવું દ્રવ્ય ફક્ત ચામડીના આવરણ નીચે આવેલું હોવાથી તેના પર મોહ થાય છે. અને ખરેખર કહીઈ તો આ મોહ ચામડી ઉપર નોજ કહી શકાય. ચામડાના આ શરીર રૂપ કોઠારમાં ભરેલાં અન્ય દ્રવ્યો ઉપર નો નહીં અને એટલે જ ચામડી ઉપર થતા એક નાના સરઆ ને દાગ ને પણ દૂર કરવા આપણે ઘણા જ પ્રયત્નો કરીયે છીયે. આ દેહનું આ શરીરનું સાચું સ્વરૂપ જાણવા છતાં પણ તેના મોહમાંથી આપણે છૂટી શકતા નથી.

આપણે સંસારી છીયે. સંસારમાં રહેવાનું છે. સંસારના બધા જ વ્યવહારો. ધંધો રોજગાર કરવાના છે. ઊંઘમાથી જાગીને ફરી ઉંઘીયે ત્યાં સુધી આવી જ બધી પ્રવૃત્તિમાં ગલાબુડ રહેવાના છીયે. છતાં પણ આ બધું અનાશક્તિ ભાવે-કરવામાં આવે એટલે કે કરવાની ઈચ્છા ન હોવા છતાં કરવું પડે એ માટે કહ્યું છે. પૂર્વના જાવોં ના સંચિત કર્મોના રૂણાનુબંધના કારણે આ બધું કરવું પડે છે. પરંતુ આ બધું કરવાની આશક્તિ નથી. મનની ઈચ્છા નથી. આ રીતે જે કંઈ થાય છે તે હું કરૂં છું તેના બદલે પૂર્વના કાર્મો કરાવે છે એ ભાવના હોવી જોઈયે જ્યારે આજે તો એવું છે કે :-

'હું કરું હું એજ અજ્ઞાનતા, સકટનો ભાર જેમ ધાન તાણે' એ કહેવત સમઝવા જેવી છે. ગાડા નીચે ચાલતો કુતરો પોતે સમઝે છે કે ગાડું હું જ ખેંચી જાઉ છું જ્યારે ગાડું તો તેને જોડેલા બે બળદોના આધારે ચાલી રહ્યું હોય છે. અને એ રીતે આ સંસારના જીવો પોતે જે નથી કરતા પર પોતે કરે છે. એવું મમત્વ ધરાવે છે. જ્યારે ખરેખર તો પોતે કરે તે પણ પોતે નથી કહેતો એવી ભાવના હોવી જોઈએ. આ બધા પાછળ યશ-કીર્તિ પર કામ કરી જાયે છે. માન મોભો પણ તેનું કારણ બને છે. આજે દરેક ને માન માભો પદવી-યશ-કીર્તિની એટલી પડી છે કે અન્યનું કરેલ કાર્ય પણ પોતાનાં નામે ચડાવતાં કોઈ અચકાતું નથી. આવી ઊર્ધ્વગામી પરિસ્થિતિમાં અનાશક્ત ભાવના હોવી મુશ્કેલ દુષ્કર બની જાય છે અને આ અનાશક્ત ભાવ એટલેજ 'જીવતા-મરાણ' આપણે જીવિત છીએ. શરીર હાલચાલે છે. બધાં કાર્ય કરે છે. આત્મા એમાં બેઠેલો છે. જીવ તેમાં સમાયેલો છે. છતાં પણ આ દેહ મારો નથી. આ દેહ નો સંબંધ સારો નથી. હું તો આત્મા છું આ દેહ તો પૂર્વના કર્મોના કારણે મળ્યો છે. અને આ મળેલા દેહ દ્વારા પૂર્વના કર્મો ભોગવીને નષ્ટ કરવાના છે. નવા કર્મોનું ઉપાર્જન ન થાય તેનું ખાસ ધ્યાન આપવાનું છે. અને આ કર્મ પુરું થતાં દેહની કોઈ આવશ્યકતા નથી એ સમઝવાનું છે. હું એટલે આત્મા છું દેહ નહી એ લક્ષ રાખવાનું છે આ માટે શ્રીમદ્ રાજચંદ્રે કહ્યું છે કે

હું કોણ છું ક્યાંથી થયો ? શું સ્વરૂપ છે મારું ખરૂં ?
કોના સંબંધે વળગણો છું ?

આત્માના સ્વરૂપ ને ઓળખી દેહ ધારણ કર્યો હોવા છતાં દેહાતીત ભાવ રાખી 'જીવતાં-મરણ' પામીયે એ રીતે જીવીયે તો જરૂર આપણો આત્મા ઉચ્ચ ગતિ ને પામે. કોઈ પર મજૂર ને થી બીજે સ્થલે વિષ્ટાથી છલોછલ ભરેલ ઘડો બંધ કરીને તેને ઉપાડી એક સ્થલે લઈ જવાનું કહેવામાં આવે તો તે મજૂર તે ઘડો માથે ઉપાડી એક સ્થળે થી બીજી સ્થળે લઈ જશે જો તેને ઘડા માં શું છે તે ખબર નહીં હોય તો, પરંતુ જો તેની સમક્ષ તે ઘડામાં મલ-મૂત્ર વિષ્ટા ભરવામાં આવે અને પછી કહેવામાં આવે કે આ ઘડો ઉપાડી બીજે મુકી આવ તો ગમે તેવી જરુરીયાત વાલો ગરીબ મજૂર પણ તે ઉપાડી બીજે મુકવા હા નહીં પાડે જ્યારે મલ-મૂત્ર હાડ-માસ અને લોહી થી છલોછલ ભરેલ આ શરીર રૂપ ઘડા માં આપણો આત્મા તો ડૂબી ગયો છે. છાણા નો કીડો જેમ છાણામાં રહ્યો છતાં આનંદ પામે તેમ આ જીવ અનેક પ્રકારના દુર્ગંધી દ્રવ્યો થી ભરેલી આ કાયામાં રહી આનંદ માણી રહ્યો છે. ખરેખર આત્માના અધ:પતનની આ કેવી કરુણતા છે. લોહી અને પરૂ થી ભરેલા આ શરીર ઉપર આપણે એટલા તો મોહી પઈયા કે આ શરીરમાં અનેક પ્રકારના દુ:ખાવા થતા હોય. અનેક સ્થલે થી અનેક પ્રકારનાં દુર્ગંધ મારતા લોહી પર નિકલતા હોય છતાં પર એ જીર્ણ થઈ ગયેલ આ શરીરને છોડવા જીવ તૈયાર થતો નથી. કહેવાય છે કે 'સો વરસે પણ સાકર મીઠી લાગે' એ મુજબ આવી છેલ્લી સ્થિતિમાં શરીર હોવા છતાં ઈન્દ્રિયો ને વશ થયેલ જીવ આવી ભયાનક અને દયાજનક સ્થિતિ હોવા છતાં કામ-ભોગની ઈચ્છા ને પર છોડી શકતો નથી જે કામ-ભોગ ભોગવવાની તેની શારીરિક સ્થિતિ ન હોવા છતાં મન થી તેવી ઈચ્છાઓ કરતો જ હોય છે. તો પણ ન હોવી જોઈએ. જીવંતે જીવ આ શરીર મારું નથી. હું પોતે શરીર નથી આત્મા ઉંછું એ રીતે દેહ હોવા છતાં દેહાતીત પણું અનુભવવું તેનું જ નામ 'જીવતાં-મરણ' નો સ્વીકાર કરવો.

ભોગવિલાસો, પાપચેષ્ટાઓ, અને મર્યાદાતીત મૈથુનકર્મો તો પશુઓ પણ કરે છે. જ્યારે તમે તો માનવ છો, ભણેલાગણેલા છો. ખાનદાની છો, સમાજ તથા દેશના હિત કાર્યો કરનારા લીડર છો. અને ધાર્મિક ભાવવાળાઓ છો. માટે તમારા ખાનગી જીવનમાં પરસ્ત્રી કે વેયા ગમન તથા શરાબપાન આદિ દોષોને સ્થાન આપશો નહિ.

અનન્ત ભવોને બગાડનાર અનન્તાનુબંધી કષાયોને દબાવ્યા વિના, મિથ્યાત્વમોહનો ક્ષયોપશમ પ્રાય: અસભવિત છે. આવી સ્થિતિમાં સમ્યક્ત્વ, સમ્યગ્દર્શન આત્મદર્શન, તથા પરમાત્મદર્શન પણ હજારો માઈલ દૂર રહે છે. માટે સાધક! સૌ પ્રથમ કષાયોના દૂરીકરણનો માર્ગ સ્વીકારવો, શ્રેયસ્કર છે.

ણમોકારમંત્ર : માનવતાના વિકાસનુ સાધન

– ડૉ. શેખરચંદ્ર જૈન

લગભગ વિશ્વના પ્રત્યેક ધર્મમાં કોઈ મંત્ર વિશેષની મહિમા અને મહત્તા હોય છે. હિન્દુ ધર્મમાં જે મહત્તા ગાયત્રી મંત્રની છે તેવુંજ મહત્ત્વપૂર્ણ સ્થાન જૈન ધર્મમાં નમસ્કાર કે ણમોકાર કે નવકારમંત્રનું છે. વિવિધ નામોથી ઓળખાતા આ મંત્રની વિશેષતા છે કે તેના પદો, લેખન, ઉચ્ચારણ કે ક્રમમાં કોઈ ભિન્નતા કે જુદાપણું - ભેદ નથી.

'ણમોકારમંત્ર' જૈન ધર્મના ભ. મહાવીર પછી થયેલા વિભાજિત સમ્પ્રદાયોમાં ક્યાંય વિભાજિત કે વિભિન્નરૂપે વિભાજિત થયેલ નથી. આ અવિભાજ્યપણામાં મંત્રની શક્તિ પોતે જ કારણ અને પ્રભાવ છે. અને બધા સમ્પ્રદાયોની ભાવાત્મક એકતાના પ્રતીક કે સાંકળરૂપ તેની મહત્તા રહી છે.

સહુથી પહેલા જૈનોએ એક ભ્રમ કે અધિકારની ભાવના છોડવી જોઈએ કે આ માત્ર જૈનોનો મંત્ર છે. જોકે એ પણ હકીકત છે કે મંત્રનો સ્વીકાર, નિર્વાહ અને આરાધના, વંદન, સ્તવનની દ્રષ્ટિએ તે જૈનો સુધી સીમિત થઈ ગયેલ છે.

નમસ્કાર મંત્રની સર્વાધિક વિશિષ્ટતા છે કે તે ગુણોની વંદના કરવા માટેનો મંત્ર છે. કોઈપણ પદમાં તે વ્યક્તિલક્ષીકે વ્યક્તિ વિશેષને નમસ્કાર કરી મહત્ત્વ આપનાર નથી. સંપૂર્ણ મંત્રમાં ક્યાંય કોઈ તીર્થંકર વિશેષ કે ધર્મ કે સમ્પ્રદાયના નામનો ઉલ્લેખ નથી. દરેક પદ ગુણવાચક છે. જે કોઈમાં પણ આ ગુણો છે તે સર્વે પૂજ્ય છે - વંદનીય છે.

પ્રશ્ન થાય છે કે આ નમસ્કાર શાને માટે ? ગુણગાન કેમ? તો ઉત્તર આમ આપી શકાય કે નમસ્કારની આ ક્રિયા કે સ્મરણમાં 'નમન'નું પ્રાધાન્ય છે. 'નમન' તે માર્દવ ભાવનાનો પ્રતિભાવ છે. જ્યાં સુધી માણસમાં અહમ્ભાવ રહેશે, અભિમાન રહેશે ત્યાં સુધી તેના અંતરમાં ઋજુતા (કોમળતા) આવી શકે નહિં. જ્યાં સુધી માનકષાય રહેશે ત્યાં સુધી તે ક્રોધ, માયા અને લોભથી પીડાયા કરશે. અને, જ્યાં સુધી આ દુર્ગુણો રહેશે ત્યાં સુધી 'નમન'ની સરળતા, નમ્રતા આવી શકે નહીં. આ દ્રષ્ટિએ પણ મંત્રની શરૂઆતથીજ વ્યક્તિમાં નમ્રતાનો ગુણ જન્મવો જોઈએ. એટલેકે માનકષાયથી ઉપર ઉઠવું જોઈએ. **આધ્યાત્મની ઉચ્ચ ભૂમિકા પર પહોંચેલ સાચા અર્થમાં નમન કરેછે કારણકે તે "ન-મન" થઈ ચુકેલો હોય છે.** અર્થાત સર્વ પ્રકારના વ્યાવહારિક કાર્યકલાપ થી મુક્ત થઈ ગયેલો હોય છે. અને તે આત્માની નિકટ પહોંચેલો હોય છે. તે સમસ્ત વિષય-વાસનાઓથી મુક્ત થયેલો હોય છે. આવી વ્યક્તિ ને માટે જ 'ન-મન' સંભવી શકે. બીજા અર્થમાં વિચારીએ તો 'ન-મન' નો જો છેલ્લો 'ન' ના નીકળે એટલે **'નમ-ન' નો ભાવ રહે તો સ્પષ્ટ સમજવું જોઈએ કે હજી અહમ્ ભાવનું તિરોહણ થયું નથી.** 'નમન'નો ભાવ કે ગુણ ત્યારેજ પ્રગટે છે જ્યારે માનવના કષાય નષ્ટ થાય કે મંદ થાય. અને વિવેકજ્ઞાન પ્રગટે. એટલે તે વ્યક્તિમાં સત-અસત્, સાચા-જૂઠા, રાગી-વિરાગી વગેરેનો વિવેક હોય. આ

વિવેક હશે તો જ સત્ય સમજી શકાશે. જ્યારે સત્ય સમજાય છે ત્યારે આપણે 'નમન'ને યોગ્ય પાત્ર ને પિછાણી શકીએ છીએ. તાત્પર્ય કે નમનનો સંબંધ વિવેકબુધ્ધિથી થાય છે.

'નમન' કે 'નમસ્કાર'માં ભૌતિક સુખોની આકાંક્ષાથી વિશેષ જ્ઞાન, બુધ્ધિ, ચારિત્ર્યની દૃઢતાની પ્રાપ્તિની ભાવના વિશેષ હોય છે. ણમોકારમંત્રનું માત્ર રટણ કરવાથી નહિં પણ જ્યારે તેની સાથે શારીરિકક્રિયા, મનોભાવોનું સામંજસ્ય થાય છે ત્યારેજ તે સાર્થક બને છે. ફળવાન બને છે. 'નમસ્કાર' વખતે આપણું મન કોમળ અને વિચાર સરળ તેમજ પવિત્ર હોય છે. આપણે બન્ને હાથ જોડી, મસ્તક ઝુકાવી પોતાની લઘુતા વ્યક્ત કરીએ છીએ. માથું આરાધ્યના ચરણોમાં ઝુકે છે. જ્યારે મસ્તક આરાધ્યના ચરણોમાં ઝુકાવીએ છીએ ત્યારે તેમના ચરણાંગુલિમાંથી ઝરતી ઉર્જાની કિરણો આપણા મસ્તકમાં પ્રવેશ કરે છે. જેથી બુધ્ધિને, વિચારશક્તિને નવી ઉર્જા-શક્તિ મળે છે. આવીજ રીતે આરાધ્ય જો તેમનો પંજો (આશીષપૂર્ણ હાથ) આપણા માથે મૂકે તો તેઓની હાથની આંગળીઓમાંથી નિકળતી શક્તિ મસ્તકમાં સંક્રમિત થાય છે. **આ રીતે આ પવિત્ર મંત્ર થી આપણે મહાન, પવિત્ર, પૂજ્ય આરાધ્યની શક્તિને પોતાના મંગજ-શરીરમાં પ્રાપ્ય બનાવી શકીએ છીએ.**

'નમસ્કાર' કરતી વખતે એકજ ખેવના હોવી જોઈએ કે હું જેને નમસ્કાર કરી રહ્યો છું તેના ગુણો મારામાં અવતરે અને હું પણ એમના જેવો બની શકું. જો આ ભાવના હશે તોજ નમસ્કાર મંત્રની મહતા છે અન્યથા માત્ર રટણ છે. આ વિવેચનથી સ્પષ્ટ થાય છે કે **'નમસ્કાર' વ્યક્તિના અહમ્‌ના ક્ષય, વિવેકના ઉદય, ઉર્જાપ્રાપ્તિના માધ્યમ અને ગુણ ગ્રાહકતાનો પ્રતીક મંત્ર છે.**

'મંત્ર' શક્તિનો પ્રતીક માનવામાં આવે છે. સિંધુને બિન્દુમાં સમાવી લેવાની શક્તિ આ મંત્રોના બીજાક્ષરોમાં હોય છે. પણ, ધ્યાન રાખવાની બાબત એ છે કે મંત્ર-જ્ઞાનારાધના, ચરિત્રસાધના અને વિશ્વકલ્યાણ માટે હોય. વ્યક્તિગત ભોગ, સ્વાર્થ કે દુશ્મનાવટ માટે ના હોય. આ 'નમસ્કાર મંત્ર'ની વિશેષતા છે કે તેમાં ક્યાંય **પરહિતની વાત કે ભાવ નથી.** તેની સાધના મેલી વિદ્યા માટે સંભવ નથી. **પવિત્ર મંત્ર પવિત્રતા જ પ્રદાન કરે.**

જો 'ણમોકારમંત્ર'ને આવા ગુણોના પરિપ્રેક્ષ્યમાં સમજીએ તો સ્પષ્ટ છે કે સૌથી પહેલા - "ણમોઅરિહંતાણં" પદમાં અરિહંત ભગવાનને નમસ્કાર છે. અરિહંત કોઈ વ્યક્તિ વિશેષ નથી. પણ, જે કોઈ સાધકે પોતાના આન્તરિક, આત્મઘાતક કષાયરૂપી શત્રુઓ પર તપ, સંયમ અને સાધનાથી વિજય પ્રાપ્ત કર્યો છે તેઓ અરિહંત છે. જેઓએ પોતાના તપથી નિર્ભેળ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું છે. જેઓએ સ્વયં પ્રકાશ પ્રાપ્ત કર્યા પછી વિશ્વના અંધારામાં અથડાતા, ધ્રૂજતા માનવોને પ્રકાશિત કર્યા છે. જેમની દિવ્યધ્વનિ ચરાચર માટે કલ્યાણી બની છે. જેઓએ આત્મ પ્રકાશ માટે શરીર ને સંયમની લગામથી સંયત કર્યું છે. જેઓના ચાર ઘાતિ કર્મ નાશ પામ્યા છે. એટલે કે જેમના જ્ઞાન-દર્શન ઉપર સંશયના આવરણ રહ્યા નથી. જેઓએ કર્મબંધન ના રાજા મોહનીય કર્મનો ક્ષય કર્યો છે. જેમના માર્ગના તમામ અંતરાય-વિઘ્ન સમાપ્ત થઈ ગયા છે. જેઓ વીતરાગ છે. સમૃદ્રષ્ટિ છે. આવા ગુણધારી સર્વે અરિહંત છે. અને આવા અરિહંતોને નમસ્કાર કરવામાં આવે છે. અરિહંતોને નમસ્કાર એટલે ચાર કષાયો ઉપર વિજયની આકાંક્ષાને દ્રઢ કરવાની ભાવના, આત્મકલ્યાણમાં સ્થિર થવાની કામના, સ્વ-પર પ્રકાશક જ્ઞાનનો વિકાસ

કરવાની દૃઢતા પ્રાપ્તિ, સંસારમાં ભ્રમિત પ્રાણીઓને મનુષ્યોને સત્પથ દર્શન કરાવવાની ભાવના કેળવવી. અને કરૂણા, દયા, મૈત્રી, સમાનતા ક્ષમાના ભાવોને દૃઢ કરવાનો સંકલ્પ કરવો. આવા ગુણધારી અને ગુણજ્ઞ બનાવનાર જે અરિહંત છે તે સર્વેને હું નમસ્કાર કરું છું.

"ણમોસિધ્ધાણં" પદમાં સિધ્ધ અર્થાત તે અરિહંત કે જઓએ સ્વ-જ્ઞાન-આલોકથી પ્રાણીમાત્રને સત્પથ દર્શન કરાવ્યું છે. તેઓ ઉત્તરોત્તર આત્મસાધનામાં દૃઢ થતા ગયા. બાકી રહેલ ચાર અઘાતિયા કર્મોનું ક્ષય કરી એટલે હવે જેઓને શરીર રચનાની જરૂર રહી નથી. આયુનો મોહ કે કુળની ઈચ્છા નથી અને હવે જે સંપૂર્ણ આન્તરિક કે બાહ્ય પીડાથી મુક્ત થયા છે. જેઓ જન્મ-મરણના દુઃખથી મુક્ત બન્યા છે. જેઓએ આત્માના સાચા સ્વરૂપને સિધ્ધ કર્યા છે. આ રીતે સિધ્ધોને નમસ્કાર એટલે આત્માની ઉત્કૃષ્ટતમ અવસ્થાને નમસ્કાર. જન્મ-મરણના કષ્ટોથી મુક્તિ પ્રાપ્તિ ને નમસ્કાર. જીવનની સાર્થકતાને નમસ્કાર.

'ણમોઆયરિયાણં', 'ણમોઉવજ્ઝાયાણં', 'ણમોલોએસવ્વસાહૂણં'' આ ત્રણ પદોમાં આચાર્ય, ઉપાધ્યાય અને સર્વે સાધુઓને નમસ્કાર કરવામાં આવેલ છે. આ ત્રણ પદોમાં મૂળતઃ તો સાધુને જ નમસ્કાર કરવામાં આવેલ છે. સાધુ એટલે કોઈ વિશેષ પ્રકારના વસ્ત્રધારી કે દિગંબર એજ થતો નથી. સાધૂ તો એ છે જેની સાધનાની ધૂણી સતત ધખતી રહે છે. સંત તો એ છે જેની વાસનાઓ નાશ પામી છે. મુનિ તો એ છે જે મૌન થઈને નિરંતર આત્મા સાથે તદાકાર થવાનો પ્રયાસ કરે છે. સાધુ તો એ છે જે જ્ઞાનની અંજનશલાકાથી અજ્ઞાન ના અંધકારને દૂર કરી જ્ઞાનચક્ષુ ખોલે છે. સાધુ તો એ છે જે મોક્ષ માર્ગનો પથદર્શક છે. જે વિષય, આશા, આરંભ-સમારંભ, પરિગ્રહથી મુક્ત બની જ્ઞાન-ધ્યાન-તપસ્યામાં સદા લીન રહે છે. સાધુ તો એ છે જે સકલદેશ (સર્વરૂપે) બાર વ્રતોનું પાલન કરે છે. બાર પ્રકારના તપ તપે છે. જે ભવના ભૌતિક ભોગોથી વિરકત થઈ આત્મામાં દૃઢ બને છે. જે વિષયોથી મુક્ત, સામ્યભાવના ધારક છે, તેઓજ સાચા અર્થમાં સાધુ છે. જેઓ પરિષહ સહન કરે છે. જેઓના ખાન-પાન, આહાર-વિહાર, પોતે એક દાખલા સ્વરૂપ હોય છે. જેઓ યત્કિંચિત પણ પરિગ્રહથી મુક્ત એવા અકિંચન્યવ્રત ધારી છે. જેઓ "જિન" દ્વારા પ્રણીત માર્ગના પ્રદર્શક છે. એવા સાધુ જ નમસ્કારને યોગ્ય છે. આ સાધુઓમાં જે વરિષ્ઠ છે. સંઘના સંચાલક છે. જે નવદીક્ષિત સાધુઓના પથદર્શક, દીક્ષાગુરુ છે. તે આચાર્ય વંદનીય છે. જેઓ સ્વયં આગમના જ્ઞાતા છે, જેઓ અન્ય સાધુઓને જ્ઞાન-દાન આપી તેઓને જ્ઞાનમાં પ્રતિષ્ઠિત કરે છે તે ચારિત્ર્ય-ધારી સાધુ ઉપાધ્યાય છે. આવા પરોપકારી જ્ઞાનદાતા નમન યોગ્ય છે. અન્ય સર્વે સાધુ ભગવંત જેઓ આચાર્યની આજ્ઞામાં રહી જ્ઞાનાર્જન કરે છે. આવા ગુણ અને ચારિત્ર્યધારી બધાજ સાધુઓ વંદનીય છે. આ સાધુઓ આત્મ કલ્યાણતો કરે જ છે પણ પોતાના આચરણ અને ઉપદેશથી ગૃહસ્થો ને ભગવાન જિનેન્દ્રના સંયમ માર્ગ પર આરૂઢ થવાની પ્રેરણા આપે છે. આ જ્ઞાનદાન જ તેઓની સ્વ અને પર પ્રકાશક કરનાર મૂળ વૃત્તિ છે. આવા સાધુઓ કે જેઓ પોતે વિરાગી છે. એષણાથી મુક્ત છે, આત્મલીન છે તેઓને નમસ્કાર કરવામાં આવેલ છે. આ નમસ્કાર અમારામાં રહેલી સાધુવૃત્તિને પ્રેરિત કરે. અમો પણ સંસારના વિષય કષાયોથી મુક્ત બનીએ. આમ ભગવાન જિનેશ્વરના પથદર્શકને જ આપણે વંદન કરીએ છીએ.

આ વિવેચનથી સ્પષ્ટ થાય છે કે આ પંચ પરમેષ્ઠીના વંદનમાં ક્યાંક વ્યક્તિપૂજા નથી. પણ ગુણોની પૂજા છે. સતત ઉર્ધ્વગમનની પ્રેરણાની પૂજા છે.

આ પંચનમસ્કારની સાથે તે મંત્રનો મહિમા અન્ય ચાર પદોમાં વ્યક્ત છે –

"એસો પંચણમુક્કારો, સવ્વપાવપણાસણો

મંગલાણં ચ સવ્વે સિં, પઢમં હવઈ મંગલમ્ ।"

કેવો છે આ મંગલમંત્ર ? તો કહે છે કે આ પંચનમસ્કાર મંત્ર સર્વ પાપોનો નાશ કરનાર છે. સહુનું કલ્યાણ કરવાવાળો છે. જે કોઈ પણ આનું પઠન કરશે તેનું મંગળ-શુભ થશે. આ શબ્દાર્થનો લાક્ષણિક અને વ્યંજનાપૂર્ણ ભાવાર્થ સમજીએ તો આ મંત્ર સર્વ પાપોને દૂર કરનાર છે. પાપ શું છે ? સરળ પરિભાષા કરીએ તો અમારા મનના વિકારો કે જે અમોને અસંયત બનાવે છે. માનવતાના ગુણોથી ચ્યુત કરે છે. વિષય-વાસનાઓમાં ફસાવીને ચતુર્ગતિમાં ભવ-ભ્રમણ કરાવે છે. જે સંસારના જન્મ-મરણના કારણભૂત છે. જે કુભાવોને કારણે આત્માના ઉત્તમગુણ ક્ષમા વગેરેથી આપણે વિમુખ થઈ જઈએ છીએ. પ્રાણીમાત્ર પ્રત્યે કરૂણા, ક્ષમાભાવને સ્થાને હિંસા, ક્રોધ વગેરે પાપાચાર કરીએ છીએ. ઈન્દ્રિય સંયમથી વિપરીત આચાર-વ્યવહારમાં વિવેકહીન બની જઈએ છીએ. આપણું આચરણ માનવતાથી વિમુખ બને છે. આ બધા જ કુભાવ અને દુષ્પરિણામ તે જ પાપ છે. આ મંત્ર આપણને આ બધા પાપોથી મુક્તિ અપાવનારૂં છે. અંધકાર અને અજ્ઞાનને દૂર કરી સત્યના આલોક માં પ્રતિષ્ઠિત કરે છે.

આ મંત્રની બીજી વિશેષતા છે આમા રહેલી કલ્યાણ-ભાવના. શિવત્વ એનો પ્રધાન ગુણ છે. આ માત્ર વ્યક્તિવિશેષના કલ્યાણ કરતા ચરાચર વિશ્વના સમસ્ત પ્રાણીયોના કલ્યાણ માટે છે. આ મંત્ર 'સર્વે ભવન્તુ સુખિનાં' ના વિચારોનું દ્યોતક છે. જ્યાં સુધી બધા પ્રાણી સુખી-સમ્પન્ન નહીં થાય ત્યાં સુધી વિશ્વમાં વાસ્તવિક સુખ-શાંતિ સંભવ નથી. આજના સંતપ્ત હિંસામાં સપડાયેલ, યુધ્ધોન્માદી વિશ્વના કલ્યાણ માટે, પથભ્રષ્ટ મનુષ્યની બુધ્ધિના પરિષ્કાર માટે આ મંત્ર રામબાણ ઈલાજ છે. જ્યારે સહુના કલ્યાણની વાત હોય તો જ વાતાવરણ શાંત, સુખમય, મૈત્રીપૂર્ણ અને સમભાવમય બને છે. આવું ઉત્તમ વાતાવરણ સહુના કલ્યાણનું પ્રતીક છે. આ કલ્યાણ માટે આ મંત્રની આરાધના કરીએ છીએ કે અમારૂં કલ્યાણ થાઓ. એટલે કે અમારામાં માનવતાના ગુણોનો વિકાસ થાય. અમો દેહથી દેહાતીત બની આત્મસાધનામાં તત્પર બનીએ.

આ નવપદના વિવેચનથી સ્પષ્ટ છે કે આ મંત્ર ગુણોની આરાધના અને સ્મરણનો મંત્ર છે જે માનવને માનવ બનવાના ગુણો શીખવે છે અને કલ્યાણકારી છે.

મંત્રની આરાધનાનું મહત્ત્વપૂર્ણ અંગ છે - મંત્ર પર શ્રધ્ધા આ શ્રધ્ધા ઉત્તરોત્તર ધ્યાનની ભૂમિકા સુધી વિસ્તરે છે. સાધક આ ધ્યાનની વૃદ્ધિ થી સમાધિની ઉંચાઈઓને પ્રાપ્ત કરી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે. આ મુક્તિ એટલે વિષય કષાય, વાસનાઓથી મુક્ત બની, સ્વાર્થથી મુક્ત બની આત્મકલ્યાણ અને વિશ્વ કલ્યાણ કરવાની ભાવનાનો વિકાસ.

આવા અનેક દાખલાઓ છે કે આ મંત્રની આરાધના અને સ્મરણથી મોટામા મોટા દુષ્ટ નિવારી શકાયા. અંજન નિરંજન બન્યો. શેઠ સુદર્શન સૂળી પરથી સિંહાસન રૂઢ થયા. અરે ! વર્તમાન જીવનમાં પણ જો આપણે સહુ સંપૂર્ણ શ્રધ્ધા અને વિશ્વાસ રાખીને આ મંત્રની આરાધના કરીએ તો જરૂર મનની શાંતિ મળે, સ્વાર્થોથી મુક્ત બની શકીએ અને કષાય મુક્ત થઈ શકીએ. નિર્ભયતા અને સત્યકથનના ગુણો પ્રાપ્ત કરી શકીએ. અને આવા ગુણોની પ્રાપ્તિ તેજ મુક્તિ છે.

- शाश्वत धर्म के संरक्षक -

* शा. ओटमल वेलाजी कांकरिया - सुरा निवासी , * शा. ताराचंद फुटरमल फौजमल, भानाजी वेदमुथा-आहोर निवासी, * कटारिया संघवी भंवरलाल, उगमचंद, विरेन्द्रकुमार राजेन्द्रकुमार बेटा पोता तोलाजी धाणसा निवासी, * शा. तिलोकचंद, नरसींगमल, पुखराज, परखचंद, सांवलचंद, बेटा पोता प्रतापचंदजी - सरत निवासी, * संघवी मिश्रीमल, हस्तीमल, समरथमल, हिरालाल शांतिलाल जिनेशकुमार, बेटा पोता कन्नाजी कटारिया-जाखल निवासी. * नैनावा श्री जैन श्वेतांबर सकल संघ, गुरूभक्तगण-नैनावा, * श्री समकित गच्छीय जैन श्वेतांबर संघ-धानेरा, स्व. मयाचंद धुलाजी की स्मृति में धर्मपत्नी धापुबाई, सुपूत्र कुशलराज, भ्राता निहालचंद एवं श्रीमती जडावबेन कातरेला वोहरा आहोर निवासी, * मेहता तेजराज, जयंतीलाल, राजेन्द्रकुमार, अरविंदकुमार, बेटा पोता रायचंदजी जसराजजी भूती निवासी, * मोरखीया चंदुलाल, बाबुलाल, रसिकलाल मेहशकुमार, परेशकुमार, अल्पेशकुमार, रुपेशकुमार, पुत्रपौत्र स्व. मोरखीया नानचंद मूलचंद भाई-थराद निवासी, * स्व. मुणोत रिखबचंदजी की स्मृति में धर्मपत्नी ठेलीबाई सुपुत्र बाबुलाल, सुमेरमल, अशोककुमार - रमणिया निवासी,

* श्री राजेन्द्रसूरि जैन ट्रस्ट - मद्रास, * स्व. रामाणी शेषमलजी की स्मृति में मांगीलाल, फुटरमल, शांतीलाल, किशोरकुमार, बेटा पोता खुशालजी रामाणी-गुडा बालोतान (फर्म. शांतिलाल ज्वेलर्स, नेल्लोर) * शा. मोहनलाल, पारसमल, सुरेशकुमार, किशोरकुमार, कमलेशकुमार, अरविंदकुमार, बेटा पोता सांकलचंद जेरूपजी - भेंसवाड़ा निवासी (गोल्डन ज्वेलरी, नेल्लोर), * स्व. सुगीबाई धर्मपत्नी अचलजी की स्मृति में पुत्र कांतिलाल प्रपौत्र रमेशकुमार बागरा निवासी, * श्री श्वेताम्बर जैन संघ - सियाणा, * श्री जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ - थराद * श्री जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ - चौराऊ, * दोशी सोमतमल, गुमानमल, सुखराज सांवलजी ह. गुमानमल सावलचंदजी चेरिटेबल ट्रस्ट, बम्बई , सुशीला बहन की स्मृति में भीमराज, हिमांशकुमार, श्रेणिककुमार बेटापोता बेचरदासजी छाजेड़ - नैनावा निवासी हाल मु. सांचोर (राज), * श्री गोड़ी पार्श्वनाथ जैन देरासर पेढी - सोनारी सेरी - थराद, प्रतिष्ठा प्रसंगे गुरूभक्तों द्वारा. * स्व. जेठमलजी खुमाजी की स्मृति में चंदनमल, कैलाशचन्द, हंसराज, शीतलकुमार, अश्विनकुमार परिवार बागरा निवासी, फर्म : राजस्थान फायनेन्स कार्पोरेशन - काकीनाडा, * श्री विमलनाथ जैन डोसी देहेरासर - थराद.

डाक पंजीयन क्रमांक MH/THN १६१ पहले से डाक व्यय चुकाये बिना भेजने की अनुमति प्राप्त लायसेन्स नं. ३५

दीर्घायु एवं शाकाहार

रुस के अबेकिशिया प्रांत में अधिकतर लोग शाकाहारी हैं। वे विश्व में दीर्घायु के लिये प्रसिद्ध हैं, जिनमें कई लोग 135 वर्ष की उम्र के भी हैं। इसी प्रकार भारत, जापान, अफ्रीका के अनेक लोग सौ वर्ष आयु वाले होते हैं।

शारीरिक क्षमता एवं शाकाहार

आप यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि विश्व में अधिकतर उच्च कोटि के पहलवान, कुश्तीबाज, खिलाड़ी, लम्बे दौड़ने वाले, कलाकार एवं नृत्यकार स्त्रियाँ भी शाकाहारी होती हैं।

पर्यावरण एवं शाकाहार

प्राणियों का योगदान पर्यावरण के संतुलन में महत्वपूर्ण है। जानवरों को मनुष्य खाकर नाश कर देगा तो दुनियाँ उसके रहने योग्य भी नहीं रहेगी। यह जमीन उपजाऊ नहीं रहेगी। सारा विश्व विरान हो जायेगा। जहाँ-जहाँ से पेड़-पौधे गये हैं वहाँ उर्वरा शक्ति भी समाप्त हुयी है। शाकाहार आन्दोलन अनेक कारणों पर आधारित है। यह भोजन पद्धति पशु एवं मनुष्य के जीवन हेतु एवं विश्व से हिंसा दूर करने का मुख्य सोपान है। इस कार्य में सभी को व्यक्तिगत, कौटुम्बिक एवं सामुदायिक सहयोग देना चाहिये।

शुद्ध पौष्टिक, विटामीन, प्रोटीन से भरपुर निरोगी आहार अर्थात् शाकाहार

अशुद्ध, तामसी, हिंसक, अनेक भयंकर, प्राणघातक रोगकारक आहार अर्थात् मांस, मछली, अंडे का आहार
शाकाहार आर्थिक दृष्टि से भी सस्ता होता है।

संपादक - जे.के.संघवी अ.भा. श्री. राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद के लिये
डपूजी आर्ट प्रिन्टर्स- थाने में मुद्रित।